तृतीय अध्याय

रामदेव धुरंधर के उपन्यासों में भारतीय संस्कृति एवं परिवेश बोध :-

साहित्य की सभी विधाओं में उपन्यास अपेक्षाकृत एक नयी विधा है। उसका प्रचलन आधुनिक काल के अंतर्गत गद्य के आविर्भाव पुनरुत्थानवादी प्रवृत्तियां, पत्र-पत्रिकाओं के प्रचार-प्रसार तथा अंग्रेजी साहित्य के प्रभाव के फलस्वरूप हुआ। औधोगिक क्रान्ति ने पूंजीवाद को जन्म दिया। अंग्रेजी साम्राज्य की स्थापना तथा पूँजीवाद ने भारत में नौकरीपेशा मध्यवर्ग को जन्म दिया। पुरानी सामंतकालीन व्यवस्था चरमराकर भहरा गई। फलतः उससे सम्बद्ध परंपराएँ एवं रुढियाँ भी इसमे टूटने लगीं। नगरीकरण की प्रक्रिया तीव्रतर होने लगी । इन सब कारणों से सामाजिक ढांचे में मूलभूत परिवर्तन आया और वह अधिक देवदर पेचीदा और जटिल हो गया। समाज के इस जटिल रूप की व्याख्या हेतु मानो उपन्यास ने जन्म लिया । वस्तुतः "उपन्यास" अंग्रेजी के "नोवेल" का समानार्थी शब्द है । कई एक भारतीय भाषाओं में "उपन्यास" के लिए "नोवेल" से मिलते-जुलते शब्दों का प्रयोग मिलता है । हिन्दी तथा बंगला में उसे 'उपन्यास ' कहा जाता है |

हिन्दी के प्रारंभिक औपन्यासिक विकस में अधिकतर अनूदित उपन्यासों का बोल बाला रहा है। एक प्रकार से इन अनूदित उपन्यासों मैं हिन्दी उपन्यासों का दिशा-निर्देश किया है। उस समय हिन्दी में मौलिक उपन्यास बहुत कम लिखे जाते थे। अधिकांशतः बंगला मराठी, पंजाबी, गुजराती प्रभूति भाषाओं से हिन्दी में उपन्यासों का अनुवाद होता था परन्तु तब तक हिन्दी में ऐसी कोई मौलिक औपन्यासिक उपलब्धि नहीं थी जिसे अन्य भाषा के लोग अनूदित करने के लिए प्रेरित होते । उस समय का हिन्दी कथा-साहित्य इस माने में अत्यन्त दरिद्र अवस्था में था । इस स्थिति में गुणात्मक परिवर्तन प्रेमचन्द के आविर्भाव से हुआ ।-" प्रेमचन्द मूलतः उर्दू के लेखक थे। सन् 1903 में उर्दू अखबार 'आवाज़ेखल्क' में उनका प्रथम उपन्यास "असरारे मजाविद' नवाबराय बनारसी के नाम से प्रसिद्ध हुआ था ।"1 उसके पश्चात् वे उर्दू के "ज़माना" जैसे पत्रों में नियमित लेख तथा मजमून लिखने लगे । सन् 1908 में उनका 'सोज़ेवतन' उर्दू कहानी-संग्रह प्रकाशित हुआ, जिसके कारण वे अंग्रेजी-सरकार के कोपभाजन हुए। उस समय प्रेमचन्दजी महोबा में नौकरी करते थे | जिला कलक्टर ने उनको इस कहानी -संग्रह को लेकर खूब डाँटा और "सोज़ेवतन की तमाम कापियों को जब्त कर लिया।

इतना ही नहीं आगे से ताकीद की कि वे कुछ भी प्रकाशित करने से पूर्व अधिकारियों से उसकी स्वीकृति प्राप्त कर लें । बाद में उन्होंने नवाबराय नाम बदलकर प्रेमचंद नाम से लिखने का प्रारम्भ किया | प्रेमचंद से पहले जासूसी , तिलस्मी उपन्यास लिखे गये थे | उसे फिर से पटरी पर लाने का कार्य प्रेमचंद ने किया | डॉ. रामविलास शर्मा के शब्दों में -" इसे प्रेमचंद की एक महान उपलब्धि समझना चाहिए कि उन्होंने हजारों -लाखों' तिलस्मे-होशरूबा ' और 'चन्द्रकान्ता ' के पाठकों को 'सेवासदन' का पाठक बनाया|" 2

इस तरह हिंदी उपन्यास जो वायवी कल्पनाओं, सस्ती लोकप्रियता तथा रोमानी भावुकता में भटक गया था, उसे फिर से स्थापित करने का काम प्रेमचंदजी ने किया| उन्होंने हिंदी कथा साहित्य को उसके वास्तविक गौरव से परिचित करवाया|

उपन्यास की परिभाषा :-

उपन्यास की परिभाषा न्यू इंग्लिश डिक्शनरी में इस प्रकार दी गई है| -"उपन्यास एक प्रकथनात्मक गद्ययुक्त कृति है, जिसका एक विशिष्ट आकार-प्रकार होता है तथा जिसमें वास्तविक जीवन का प्रतिनिधित्व करने वाले पात्रों और घटनाओं को निश्चित क्रम में नियोजित किया जाता है | " 3

राल्फ फॉक्स के अनुसार - "उपन्यास केवल प्रकथनात्मक गद्य मात्र नहीं है, वह मानव - जीवन का गद्य है| वह पहली कला है जिसमें मनुष्य को उसके समग्र रूप में अंकित करते हुए उसकी भावनाओं को अभिव्यक्त किया गया है |" 4

डॉ. श्याम सुन्दर दास के अनुसार -"उपन्यास मनुष्य के वास्तविक जीवन की काल्पनिक कथा है |" 5

प्रेमचंद के अनुसार - "मैं उपन्यास को मानव-चरित्र का चित्र मात्र समझता हूँ। मानव चरित्र पर प्रकाश डालना और उनके रहस्यों को खोलना ही उपन्यास का मूल तत्व है।" 6

इस विधा को अंग्रेजी में -" 'नोवेल' कहा जाता है । अनेक भारतीय भाषाओं में इसके लिए 'नोवेल' से मिलता-जुलता शब्द "नवलकथा", "नवल ' इत्यादि का प्रयोग मिलता है। परन्तु हिन्दी में इसके लिए 'उपन्यास' शब्द प्रयुक्त हुआ। 'हिन्दी साहित्य कोश' में उपन्यास शब्द से ही उसकी व्युत्पत्ति के द्वारा ही उसे परिभाषित करने का प्रयत्न किया

गया है। यथा -' उपन्यास शब्द' उप (समीप) तथा 'न्यास' (थाती) के योग से बना है, जिसका अर्थ हुआ मनुष्य के निकट रखी हुई वस्तु| अर्थात वह वस्तु या कृति जिसको पढ़कर ऐसा लगे कि यह हमारी ही है, इसमें हमारे जीवन का प्रतिबिम्ब है।" 7

इन सभी अवधारणाओं का नवनीत तथ्य यह है कि उपन्यास जीवन की वास्तविक परिस्थितियों तथा घटनाओं का कलात्मक साहित्यिक रूप है | यथार्थ से उसका गहरा सरोकार है। प्रेमचंद पूर्वकाल का हिंदी उपन्यास ,प्रेमचंद युग का हिंदी उपन्यास, प्रेमचंद के बाद का हिंदी उपन्यास इस प्रकार से हिंदी उपन्यास का विकास स्पष्ट किया गया है।

मानव जीवन की सम्पूर्ण गतिविधियों का संचालन अन्तरवृत्तियों की जिस समष्टि द्वारा होता है तथा जिसके अपनाने से वह सच्चे अर्थों में मनुष्य बनने की दिशा में अग्रसर होता है, उसे संस्कृति कहते हैं। -"यह मानव-जीवन की विशिष्ट पद्धति तथा विकास की दिशा में सतत गतिशील किंतु स्थायी जीवन-व्यवस्था है, जिसे 'मानव जीवन का सौन्दर्य एवं वैचारिक केन्द्रबिन्दु से संयुक्त सामूहिक दृष्टिकोण" 8 भी कहा जा सकता है। अतएव यह एक प्रकार से सामाजिक भाव है। इस अत्यधिक प्रचलित शब्द के संबंध में आज इतनी अधिक संख्या में परिभाषाएँ प्रकाश में आ चुकी हैं कि उनके दृष्टिकोण वैशिष्ट्य के कारण व्यक्ति को उनकी परस्पर-असम्बद्धता का आभास-सा होने लगता है। अभी तक इसकी कोई सर्व सम्मत परिभाषा नहीं निश्चित हो पाई है। अतः इसके स्वरूप-निरूपण के लिए शाब्दिक विवेचन तथा तुलनात्मक अध्ययन द्वारा इसके तात्पर्य को समझ लेना उचित होगा।

शाब्दिक विवेचन :-

संस्कृत भाषा के 'सम्' उपसर्ग तथा 'कृ' धातु के संयोग से 'संस्कृति' शब्द निष्पन्न हुआ है जिसका कि अर्थ सामान्यतः परिष्करण या परिमार्जन की क्रिया अथवा सम्यक् रूपेण निर्माण से है संस्कृति की ही भाँति 'संस्कृत' तथा 'संस्कार' शब्द भी निष्पन्न हुए हैं, जिन पर आगे विस्तारपूर्वक विचार किया जायेगा। इस शब्द का भावार्थ उपर्युक्त शब्दार्थ की अपेक्षा अधिक विशद एवं व्यापक है, क्योंकि डॉ.पी.के.श्राचार्य के शब्दों में- "इसमें परिमार्जन या परिष्कार के अतिरिक्त शिष्टता एवं सौजन्य के भावों का भी समावेश हो जाता है।" 9अतएव इस पर विस्तारपूर्वक विचार कर लेना अत्यावश्यक है

ही, किंतु यह उल्लेखनीय है कि -"यह अंग्रेजी के पर्यायवाचक के रूप में ही प्रचलित शब्द है। ऐसी स्थिति में, और विशेष कर इसलिए भी, अंग्रेजी के 'कल्चर' (culture) शब्द का अर्थ लक्ष्य कर लेना उचित होगा, क्योंकि इसे तत्संबंधी 'अर्थ के द्योतन के लिए नवगठित" 10 शब्द के रूप में कल्पित कर लिया गया है।

'कल्चर' (Culture) का तात्पर्य :-

अंग्रेजी साहित्य में 'कल्चर' (culture) शब्द का प्रयोग-" सर्वप्रथम सन् १४२० ई. में कृषि तथा पशुपालन के अर्थों में मिलता है--"जो अपने आदि- अस्तित्व में यूरोप की अन्य भाषाओं के अंतर्गत भी कृषि सम्बन्धी कार्यों का ही द्योतक था। "11 -" तब से लेकर सन् १८७१ ई० तक अनेक विचारकों द्वारा विविध अर्थों के द्योतन के लिए इसका प्रयोग होता रहा।" 12 इसके वर्तमान तात्पर्य कि -" सर्वप्रथम प्रतिष्ठा का श्रेय यांग्ल विद्वान टाइलर को प्राप्त है। जिन्होंने उस समय तक प्रचलित 'कल्चर' (culture) विषयक परिभाषाओं का विवेचन करके सन् १८७१ ई० में तत्सम्बन्धी 'सिविलिजेशन' (civilization) की समानार्थक अवधारणा का निराकरण करते हुए जिस नवीन अर्थ का प्रतिपादन किया था, वह भी इसके बासठ वर्ष पश्चात् ही पांगल तथा अमरीकी शब्द कोषों में स्थान पा सका। " 13 वर्तमान अर्थ को प्राप्त कराने वाली पृष्ठभूमि के रूप में 'कल्चर' (culture) से संबंधित अनेकविध अवधारणाओं का एक अत्यन्त रोचक इतिहास है जिसे विस्तारपूर्वक प्रस्तुत करना इस प्रबन्ध की दृष्टि से संभव भी नहीं है । अतः इससे सम्बंधित परिभाषाओं पर विचार करते समय उसे केवल सूत्र रूप में प्रसंगानुसार आगे प्रस्तुत किया जायेगा। यहाँ सर्वप्रथम इसके निरुक्तिजन्य अर्थ पर विचार कर लेना अभीष्ट होगा

"निरुक्ति की दृष्टि से इस शब्द की व्युत्पत्ति लैटिन भाषा की धातु 'कोलर' (colere) से निष्पन्न 'कुल्टुरा' (cultura) शब्द से हुई है। जो संक्षेप में क्रमश: 'पूजा करना' तथा 'कृषि संबंधी कार्य का बोधक है।" 14 इन मूल अर्थों के साथ कल्चर के वास्तविक अर्थ के समन्वय का भी प्रयास विद्वानों द्वारा किया गया है।" शब्दार्थ तथा व्युत्पत्ति की दृष्टि से 'कल्चर' तथा 'कल्टीवेशन' में जो साम्य मिलता है।"15 उसको लेकर डॉ० प्रसन्नकुमार आचार्य ने संस्कृति की प्रक्रिया को स्पष्ट करते हुए लिखा है कि "कल्टिवेशन का अर्थ कृषि है। भूमि की प्राकृतिक अवस्था को परिष्कृत करना ही कृषि का उद्देश्य है। कृषि की विभिन्न पद्धतियों द्वारा भूमि का परिष्कार किया जाता है, रोड़े,

कूड़ा-कर्कट और घास तिनके हटाकर भूमि शुद्ध की जाती है, जिससे भूमि उर्वरा बनती है। भूमि की भाँति मनुष्य की मानसिक और सामाजिक अवस्थाएँ भी विकसित हुआ करती हैं। संस्कृति अथवा कल्चर मनुष्य की सहज प्रवृत्तियों, नैसर्गिक शक्तियों तथा उनके परिष्कार का द्योतक है। जीवन का चरमोत्कर्ष प्राप्त करना इस विकास का परिणाम है।"16 इसी प्रकार कल्चर में कल्टिवेशन (cultivation) के मूल कुल्ट्स (cults) के प्रच्छन्न पर्व को प्रकाशित करते हुए सुप्रसिद्ध इतिहासकार जयचंद्र विद्यालंकार ने मानव के प्रागैतिहासिक विकासक्रमको प्रस्तुत करते हुए मानव संस्कृति के विकास का प्रारंभ उसके कृषक जीवन से ही माना है। उनके मतानुसार- "अपनी प्राथमिक अवस्था में स्तनपायी जन्तु, मानव, में उसकी संस्कृति का विकास होना उसके कृषक जीवन से प्रारम्भ होता है क्योंकि नियमित कृषि के प्रारंभ होने से ही उसे ऋतुओं का ज्ञान, भेड़ों तथा ऊँटों की ऊन कातना व बुनना, पशु-पालन तथा उनके दूध का खाद्य - रूप में उपयोग, विविध धातुओं के उपयोग, वस्तुओं का विनिमय, भूमि के स्वत्व की भावना, बागवानी, भ्रमणशील जीवन के स्थान पर एक स्थान पर रहना, सामूहिक जीवन तथा रहन-सहन में सब प्रकार की उन्नति आदि बातें सम्यक् रूप में विकसित हुई।" 17

उपर्युक्त सामूहिक जीवन के कारण मानव में परस्पर प्रेम, सहानुभूति, सहयोग, सुन्दर वस्तुओं को परखने तथा रचने की-" योग्यता तथा ज्ञानार्जन की उच्च प्रवृत्तियों का उदय हुआ जो सांस्कृतिक जीवन के विकास क्रम के प्रथम सोपान में आती हैं।" 18 अतएव कल्चर से संबंध रखने वाले उपर्युक्त 'कोलर' तथा 'कुल्ट्स' के विवेचन के आधार पर यह कहना समीचीन होगा कि कृषि विद्या के नियमों के आधार पर जिस प्रकार पेड़-पौधों को सुविकसित करके अच्छी खेती तैयार की जाती है, ठीक उसी प्रकार मनुष्यों में भी मानवता को पल्लवित करने के लिए जो पद्धति काम में लायी जाती है उसे 'संस्कृति' कहा जा सकता है ।

'कोलर' से प्राप्त होने वाले द्वितीय अर्थ - 'वरशिप' पर विचार करते समय हमें पाश्चात्य विद्वानों द्वारा प्रतिपादित उपासना पद्धति के प्रारंभिक विकास-संबंधी विचारों पर दृष्टिपात करना होगा।फ्रेंच बोआस के मतानुसार- "जिस समय यह अर्थ प्रचलित हुआ था उस समय तक मनुष्य-समाज कृषक जीवन अपना चुका था, किंतु सांस्कृतिक विकास क्रम की इस पहली सीढ़ी में कृषकों ने प्राकृतिक शक्तियों से त्राण पाने के लिए

उनकी पूजा प्रारंभ कर दी थी तथा यह पूजा मानव-मन को रुचने वाली प्रियदर्शी क्रियाओं पर आधारित थी।" 19

विश्व संस्कृति का वर्गीकरण तथा भारतीय संस्कृति :-

संस्कृति के निर्माण तथा विकास में भौगोलिक परिस्थिति तथा सामाजिक परम्परा प्रधान रूप से कार्य करती है, यह पूर्ववर्ती विवेचन के अन्तर्गत स्पष्ट किया जा चुका है। अतएव संसार में दिखाई पड़ने वाली तद्गत भिन्नता के कारण विश्व संस्कृति के विविध भेदों का होना अवश्यम्भावी है। यही कारण है कि-" एतद्विषयक विवेचकों ने व्यापक अर्थों में विश्व मानव की एक संस्कृति मानकर" 20 -" भी देश, प्रजाति तथा धर्म के आधार पर निर्मित संस्कृतियों का वर्गीकरण भी किया है | " 21 जिसके अतिरिक्त आचार्य बलदेवप्रसाद मिश्र ने-" एक अलग ढंग से भी देशज और धर्मज संस्कृतियों के समन्वय से विश्व-संस्कृति के छः प्रधान वर्गों को प्रस्तुत किया किया है।" 22 इस सम्बन्ध में यह उल्लेखनीय है कि उक्त भेदों के आधार पर अभिव्यक्त होने वाले विविध सांस्कृतिक रूपों पर अनेक प्रकार के अध्ययन अब तक किये जा चुके हैं तथा हो भी रहे हैं, किन्तु प्रस्तुत प्रबन्ध का विषय मोटे तौर पर देश अथवा राष्ट्र के संदर्भ से अभिव्यक्त होने वाली संस्कृति - भारतीय संस्कृति से होने कारण यहाँ हम मुख्यतः उस पर ही संक्षेप में विचार करेंगे |

संस्कृति तथा राष्ट्रीयता से सम्बन्धित पूर्ववर्ती विवेचन के अनुसार संक्षेप में प्रत्येक देश अथवा राष्ट्र का एक निश्चित आदर्श होता है और उस आदर्श की दिशा में होने वाले याचार-विचार, मान्यताएँ तथा उनके परम्परागत संस्कार तद्देशीय संस्कृति का निर्माण करते हैं अतः यह स्वतःसिद्ध है कि -"संसार अनेक राष्ट्रों में विभक्त होने के कारण निश्चित वैशिष्ठ्य से संयुक्त संस्कृतियों की अवस्थिति सम्भव है जिसकी युक्तियुक्तता को डॉ० प्रसन्न कुमार आचार्य ने भी विद्वत्तापूर्ण ढंग से प्रमाणित किया है।" 23 इस आधार के साथ ही इसके मूलाधार के रूप में राष्ट्र, प्रजाति, धर्म से सम्बन्धित तत्त्व ही नहीं, अपितु अन्तर्राष्ट्रीय तत्त्वों तक का अनुपम समन्वय दृष्टिगोचर होता है जिसे आगे के विवेचन में लक्ष्य किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त यह भी उल्लेखनीय है कि-"इस संस्कृति का सम्बन्ध जिस विस्तृत भू-भाग अथवा देश से है, उसके अन्तर्गत आज राजनैतिक कारणों से निर्मित भारत तथा पाकिस्तान दोनों ही राष्ट्र आ जाते हैं, क्योंकि इस संयुक्त भू-भाग की संस्कृति की अनन्तकालीन एवं सनातन परम्परा एक ही रही है।

डॉ० सुनीति कुमार चटर्जी ने इसे लक्ष्य करते हुए इस कारण समस्त भारत को एक भौगोलिक तथा सांस्कृतिक इकाई माना है।"24

अब मैं रामदेव धुरंधर के अलग-अलग उपन्यासों के संदर्भ में समीक्षा करूँगा |

'बनते-बिगड़ते रिश्ते ' उपन्यास में रहन-सहन , पोशाक , धार्मिक त्यौहार , बाल पर्व , विवाह ,लोकगीतों में संस्कृति , लोक कथाओं में संस्कृति :-

'बनते बिगड़ते रिश्ते' उपन्यास ई.1990 में प्रकाशित हुआ है।प्रस्तुत उपन्यास में मुख्य पात्र सुधा है।' कोसी-सास तथा 'तेतरी' ममिया सास है। उनके पति का नाम ' पूरन ' है। मुख्य पात्र ' सुधा ' , उनके पति 'पूरन' तथा 'सुधा' की सास 'कोसी' के आसपास ही सारी कथा चलती रहती है | इसके अलावा लीलावती, चेतन, कमलेशा, जीवना, संतू, बाबू, अतुल, परसराम, जसमती, रामजस, सुमिता, सुगन, सुखराम, कलुआ, गायत्री, काली दीन, मुनेल, मंत्री सिपलगोट इत्यादि गौण पात्र है |

सुधा एक सुखी परिवार की लड़की है। उनके पिता जयकिसुन भी धनवान और कुशल राजनेता है। समाज में उनका मान-सम्मान है। उनका खान-पान, रहन-सहन भी धनवान लोगों जैसा ही है।सभी लोग उनको वोट देते है।किसुन की एक लड़की सुधा और एक लड़का चेतन है। सुधा लाड़-प्यार से पली -बढ़ी लड़की है।उनका पालन-पोषण बड़े स्नेह-प्यार से हुआ है। उनका भाई इसी कारण उनके प्रति द्वेष का भाव रखकर पिता को कभी-कभी सुधा के विरुद्ध भड़काता है। सुधा और उसकी माँ लीलावती तथा भाभी कमलेशा को लेकर घर में ये तीन स्त्रियाँ हैं , किन्तु वाकवा शहर के सम्पन्न परिवार में रहने के बावजूद भी इन तीनों स्त्रियों को कोई भी आदर-सम्मान नहीं मिलता है।| उनका अस्तित्व तथा अस्मिता का कोई ध्यान नहीं रखा जाता है।-" मॉरीशस का जनजीवन इतनी रफ्तार से आगे गया है कि कुछ वर्षों की बात हमें आश्चर्यचकित कर जाती है | हम अपने प्यार से पूछने लगते है कि क्या हमारा देश कभी ऐसा भी था? हमारे देश में लोगों के रहने के लिए कभी झोंपडी हुआ करती थी।बहुत कम लोग पैरों के लिए चप्पल खरीदने -खरीदने में सार्थक हो पाते है।"25 लेखक ने उपन्यास में एक स्थान पर पोशाक का वर्णन किया है -"मसलन, घर में एक बूढ़ी सास होगी ,जो सफेद साड़ी में लिपटी नजर आएगी | पूजा पाठ में उसकी आस्था होगी और अपनी पूजा की थाली सजाने के लिए वह हर वक्त सुधा को याद करेगी।" 26

मॉरीशस की पोशाक एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति में बहुत अलग-अलग होती है। हालाँकि किसी व्यक्ति द्वारा पहने जाने वाले कपड़ों के संबंध में कोई सख्त पैन-आइलैंड सामाजिक दिशानिर्देश मौजूद नहीं हैं, ड्रेस कोड अक्सर उस समुदाय के आधार पर भिन्न होता है जहाँ वह जाता है और जिस स्थान पर वह जाता है। समुद्र तटों पर स्विमवीयर की अनुमति देते समय कहीं और फेंक दिया जाता है।

हिंदू महिलाएँ अपनी सांस्कृतिक विरासत के हिस्से के रूप में पारंपरिक साड़ी पहनती हैं और मुस्लिम महिलाओं को हिजाब और बुर्का पहने हुए देखा जा सकता है। स्थानीय लोगों की भावनाओं को आहत करने से बचने के लिए धार्मिक महत्व के स्थलों पर जाते समय उचित कपड़े पहनना आवश्यक है। हिंदू मंदिरों में चमड़े के सामान और लेख वर्जित हैं।

पश्चिमी पर्यटकों के द्वीप पर आने के प्रभाव के कारण हाल ही में कपड़ों पर सामाजिक प्रतिबंधों में ढील दी जाने लगी है। कई अपमार्केट रेस्तरां और नाइटक्लब अक्सर उन कपड़ों के संबंध में कुछ संयम बरतते हैं जिन्हें ग्राहक पहनना पसंद कर सकते हैं। अपने उच्च , शांत वातावरण और अनुभव को बनाए रखने के लिए, वे जींस, शॉर्ट्स और फ्लिप-फ्लॉप जैसे आकस्मिक कपड़े पहने हुए ग्राहकों को प्रवेश की अनुमति नहीं दे सकते हैं।

प्रस्तुत उपन्यास के पात्रों का भी इसी प्रकार का पोशाक है , जिनका वर्णन यहाँ पर किया गया है। सुधा, कोसी ,तथा लीलावती भी साड़ियाँ पहनती है। पुरुष पात्र पेंट तथा शर्ट्स पहनते है। मॉरीशस का भारत के गहरा नाता है ,वहाँ बड़ी संख्या में भारतीय अप्रवासियों के कारण | हालाँकि यह विडंबना ही है कि मॉरीशस के लोगों का पहनावा वैसा ही है जैसा पश्चिमी दुनियां में देखा जाता है। ट्राउजर, औपचारिक पैंट ,स्लैक्स ,कैजुअल्स, टी-शर्ट्स ,टॉप, प्लाजो पैंट, मैक्सी ड्रेसेस, वन-पीस सूट, रोमपर ,कवर-अप , सारोंग, जूते , सैंडल और फ्लिप-फ्लॉप ग्लेडियेटर शूज ,लंबी पैदल यात्रा के जूते, धूप का चश्मा, लिप् बाम , सनस्क्रीन ,क्लासिक हैट, रंगीन हेयरक्लिप इत्यादि मॉरीशस का पोशाक है।

मॉरीशस में हिंदू धर्म प्राथमिक धर्म है, इसके बाद ईसाई, इस्लाम और बौद्ध धर्म आते हैं। तीसरी सबसे ज्यादा हिंदू आबादी वाला मॉरीशस एकमात्र अफ्रीकी देश है।

मॉरीशस की लगभग 68% आबादी भारतीय मूल की है और हिंदी, तेलुगु, तमिल, उर्दू और भोजपुरी बोलती है। क्रेओल्स, फ्रेंको मॉरीशस और चीन-मॉरीशस ज्यादातर ईसाई धर्म का पालन करते हैं।

मॉरीशस में हिंदू धर्म

हिंदुओं का एक विशाल बहुमत उन मजदूरों के वंशज हैं जिन्हें ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन के दौरान द्वीप पर दासता के उन्मूलन के बाद गन्ने के बागानों पर काम करने के लिए मॉरीशस लाए थे। यह मॉरीशस को भारत और नेपाल के बाद प्रमुख धर्म के रूप में हिंदू धर्म के साथ, तीसरी सबसे बड़ी हिंदू आबादी वाला एकमात्र अफ्रीकी राष्ट्र बनाता है । इंडो-मॉरीशस समुदाय का एक महत्वपूर्ण हिस्सा दक्षिण भारत, विशेष रूप से तमिलनाडु के साथ अपनी पहचान रखता है और इसलिए, द्वीप पर तमिल त्योहार प्रचलित हैं।

मॉरीशस में कई अलंकृत हिंदू मंदिरों का निर्माण किया गया है, जो समुदाय के एकत्र होने और जश्न मनाने के केंद्र के रूप में काम करते हैं। ग्रैंड बेसिन में गंगा तालाब को एक पवित्र झील माना जाता है, जो भारत में गंगा नदी के बराबर मॉरीशस है। मॉरीशस में महा शिवरात्रि के अवसर पर हिंदू व्यापक रूप से इस पवित्र झील की तीर्थयात्रा करते हैं। महेश्वरनाथ शिव मंदिर और सागर शिव मंदिर मॉरीशस के कुछ अन्य प्रसिद्ध मंदिर हैं।

महाशिवरात्रि , गणेश चतुर्थी, दिवाली, औगदी और तमीज़ इत्यादि हिंदू त्यौहार मॉरीशस में मनाये जाते है |

इस उपन्यास में बाल पर्व का चित्रण किया गया है | एक स्थान पर बाल पर्व का निरूपण है -"सब्जियों से खेलते -खेलते उससे न जाने कब एक लाल मिर्च को अधिया लिया था और वह उसके भोलेपन हद थी जो उसने मिर्च सने हाथ को अपनी दोनों आँखों से छुआ लिया था | " 27

इस प्रकार इस उपन्यास में इन सभी त्यौहारों का चित्रण किया गया है | विवाह का वर्णन इस तरह है -"गाँव की रीति थी कि जिस किसी जवान ने यहाँ शादी की , कम से कम एक सप्ताह तो वह खेत या मजदूरी के जीवन से एकदम अलग पत्नी के साथ एकांतवास करता रहे। अपने गाँव की इस रीति का पूरन बड़े प्यार और तन्मयता के

साथ निर्वाह करना चाहता था। चाहे उसकी साँसे तक तेतरी की हाँ -ना की गुलाम थीं , लेकिन पूरन ऐसा नहीं था कि अपनी आत्मा को पहचानता नहीं था। उसे अपने आपकी पहचान थी कि वह एक मर्द है।"' 28

सुधा के विवाह में उनके पिता को आर्थिक कठिनाई का बहुत सामना करना पड़ता है। उनकी सखी को वह अपनी शादी में नहीं बुला सकती कि गायत्री को कौन सा मुँह दिखाएगी। लेकिन जब गायत्री से भेंट हुई थी तो सुधा की बजाय वह स्वयं क्षमा माँगने लगी थी। बोली थी- "सुधा, अच्छा हुआ जो तुम नहीं आई। पूड़ियाँ समाप्त हो गई थीं, जबकि निमंत्रित लोगों में से आधे से ज्यादा लोग बिन खाए बैठे हुए थे। मेरी अच्छी सुधा ! यह तो मेरे अपने घर की बात है, जो मैं किसी से बोलकर अपने घर को नंगा कर रही हूँ। पर सच मानो, तुम्हें बोलते हुए मैं पा रही हूँ कि मेरे मन से कोई बोझ उतर रहा है। हाँ तो सुधा, सच तो यह था कि "शादी के लिए पूरे रूप से हाथ खोलकर खर्च करने की आर्थिक ताकत हमारे पास नहीं थी। शादी क्या थी, समझो वह हमारे लिए कोई परीक्षा थी।" 29

कुल मिलाकर सुधा को अपनी शादी का गुमान ही हुआ था। पापा और माँ के निकट के रिश्तेदार एक सप्ताह पहले से ही शादी में सम्मिलित होने के लिए पहुँच गए थे। घर तो बढ़ा था ही, पैसा तो और भी विस्तृत था, तभी तो हर रिश्तेदार का अस्तित्व बेहद बौना बनता चला गया था। जयकिसुन के चाचा तक ने कितनी बार अपने भतीजे के सामने हाथ जोड़े, मानों अपने अन्नदाता की प्रशस्ति के लिए वह किसी उपयुक्त भूमिका की तलाश में लगा हुआ हो। लेकिन सुधा अपने पापा में सजाए गए विशाल विवाह मंडप को अपने जेहन में गुमान के रूप में ज्यादा देर सँजोए न रख सकी। वह जो कुछ था, जो संपन्नता और ठाट-बाट था, वह सुधा के बीते कल का सत्य था। आज विवाह के बाद सुधा जहाँ खड़ी थी, जिस उतार-चढ़ाव से अपने को वह द्रवित पा रही थी, निश्चय हो इस सत्य का रूप उसके लिए बहुत ही विकृत था। कहाँ से कहाँ पहुँच - गई थी वह। या यह पहुँचना कोई सपना था, जिसे वह अनजाने ही सच मान बैठी थी ? वह मुसकराई, दर्द से बोझिल मुसकान लुट जाने पर भी यह कैसा अपने ही हाथों बुना हुआ छलावा कि अभी सारा कुछ सुरक्षित है।

उसकी सुहागरात ऐसी न थी, जिसे वह याद रखना चाहती। जिस सुहागरात को उसने अपनी कल्पनाओं में पिरोकर रखा था, सुहागरात की शय्या पर उन मीठे सपनों

को चूर-चूर होना पड़ा था।-"उसे एक साधारण खाट मिली थी, जिस पर पूरन उसका हमबिस्तर हुआ था। टीन के नष्टप्राय घर में बेशुमार छेद थे, जिनसे चाँदनी बेरोक-टोक भीतर पहुँच रही थी। पूरन ने बिजली गुल कर दी थी, लेकिन भीतर पहुँचती हुई चाँदनी मानो अँधेरे को चिढ़ा रही थी। सुधा ने पूरन को अँधेरे में भी देखा था। पूरन की ओर से हर हरकत को उसने ऐसे स्वीकार कर लिया था, मानो अपनी ओर से किसी हरकत का मतलब होता - पूरे घर के लोगों को अपने दूधिया अँधेरे के बारे में परिचय देना। घर में तीन छोटे-छोटे कमरे थे। एक में उसकी सास अपनी अंतहीन बीमारियों के साथ सारी रात करवटें बदलती रही थी। उसके बगल में एक और छोटी सी खाट थी, जिस पर बाबू और संतू सोए थे। चादर के लिए दोनों के बीच काफी रात तक शोर मचा रहा था।" 30 उस शोर से तंग आकर सुधा की बीमार सास अपने भाग्य को कोसती रही थी। पर दोनों लड़के चुप होने की बजाय और अकुलाते रहे थे। उनकी शिकायत थी कि ऐसी बूढ़ी औरत के साथ एक कमरे में सोने से वे जंगल में कहीं घास पर रातें गुजार देना बेहतर मानेंगे। रसोईघर से सटकर जो कमरा था, उसमें तेतरी और जीवना सोते थे। तेतरी का एक दूसरा चरित्र सुधा के सामने था। यह वह तेतरी नहीं थी, जिसने आँचल फैलाए भावभीने शब्दों में औरतों से चुप रहने की प्रार्थना की थी। यह तेतरी अपनी जबान में अनेक गालियों को रचाए- बसाए थी, जिन्हें वह अपने दो बेटों पर वार रही थी।

तेतरी चाहती थी कि कम-से-कम आज की रात बेटे अपने जंगलीपन पर अंकुश तो लगाएँ । सुधा के लिए वे गालियाँ इतनी घिनौनी थीं कि उससे विकल्प के रूप में उन गालियों और इन लड़कों के झगड़े में से एक को चुनने के लिए कहा जाता तो निश्चित ही वह लड़कों के झगड़े को चुनती। बचपने से युक्त झगड़ा ही तो था ,किन्तु तेतरी की वे भद्दी गालियाँ...। रात के उस अंधेरे में जीवना की उपस्थिति में अनभुलाई थी। सुधा का विवाह भय , निराशा , दु:ख और दर्द से भरा हुआ था।

सुधा अक्सर सोचती कि अपनी जवानी के दिनों में जीवना कैसा रहा होगा। झुनक, कोसी और अपने खेत में काम करने आई अधेड़ औरतों से उसने जीवना और तेतरी की प्रेम कहानी के बारे में बहुत कुछ सुन लिया था। तेतरी का पति मर गया था और वह विधवा बनकर किसी तरह जी रही थी | कोसी का एक ही भाई था -जगन | वह कोसी से आठ साल छोटा था। कोसी और उसके पति ने माँ-बाप बनकर जगन का विवाह किया था। जगन के कुछ ही महीनों बाद कोसी का पति चल बसा था | इस

प्रकार इस उपन्यास के पात्रों के विवाहित जीवन का विश्लेषण करने का प्रयास मैंने किया है।

सुधा ने १५ जुलाई को बीत जाने दिया। इधर एक-दो दिन से उस पर इतनी पाबंदी नहीं थी कि वह प्रतीक्षित अतुल से मिलने न जा सकती। सुबह से ही उसके मन में उथल-पुथल थी। वह जब से यहाँ आई आकाश में बदलियाँ छाई हुई हैं या कड़ी धूप है, यह उसके सोच में आता ही नहीं था। पर आज उसने सूर्य के ऊपर चढ़ते जाने के नियम को बहुत गौर से देखा। बहुत पहले कभी देखा था कि सूर्यास्त के वक्त पूरब में लाली बिछ जाती है। एक बार अतीत में देखा हुआ दृश्य उसके लिए मानो आज दूसरी बार आकाश में फैला था। एक बार तब देखा था और एक बार अब देख रही थी। पक्षियों का कलरव पहचाना सा लगा। याद नहीं रहा, कब सुना था। याद आया, एक बार एक मीठे सपने ने उसे कच्ची नींद में जगा दिया था। आँखें मींचते हुए वह खिड़की के पास आई थी। रात का अंतिम पहर बीत रहा था। पक्षी गा रहे थे आकाश में।

१५ जुलाई को बीते पूरे दो दिन हो गए। सुधा ने इन दो दिनों को बहुत कठिनाई से पार किया। यदि सामने आग होती तो वह यह समझ तो जाती कि आग थी, इसलिए पार करने में इतनी कठिनाई हुई, पर यहाँ तो कुछ नहीं था कि दो दिनों के अंतराल को पार करने के लिए जैसे सात जुग का साहस आवश्यक होता। लेकिन यह कुछ न होना ही बहुत कुछ होना था। यह दुविधा थी क्या यह अच्छा किया ! या १५ जुलाई के दस बजे निर्धारित जगह पर पहुँचना कहीं ज्यादा अच्छा था !

तीसरे रोज दुविधा के दौर में जीत पूरन की हुई । उसने भाभी से कहा-"मैं अपनी ससुराल लौटना चाहती हूँ।"

"ऐसा निर्णय ले लेने की वजह ?"

'बस, मन ने कहा |'

'मेरा मन भी यही कह रहा था |'

'कि सुधा मूर्ख है ?'

'नहीं सुधा सुशील है| क्रोध करने के वक्त क्रोध कर लेती है और प्रेम निभाने की हालत में अपना हृदय खोलकर रख देती है |" 31 इस तरह सुधा की बातों से संस्कृति का

परिचय हमें उपलब्ध होता है |

गाय कब से हँकड रही थी किन्तु उसके प्रति सब बहरे बने हुए थे | सुधा ने शाला में जाकर गाय के सामने घास परोसी| यह वही गाय थी, जिसने सुधा की घायल किया था। यह वही सुधा थी , जिसने गौशाला के भीतर कभी न जाने की प्रतिज्ञा की थी | गाय ने पहले तो घास पर खूब थूथनी मारी, लेकिन एक-दो घास टूँगने के बाद चुपचाप खड़ी हो गई। उसके मुँह से बेतरतीब झाग झड़ रहा था और वह हाँफ रही थी। सुधा बाहर जाकर एक टीन पानी उठा लाई और उसके सामने रख दिया। गाय ने टीन से तभी मुँह निकाला -जब पूरा पानी पी लिया।

सुधा गौशाला से लौटने पर नल के पास गई और टोंटी घुमाने लगी। प्रायः रोज उससे यह गलती हो जाती थी। जरा भी पानी की आवश्यकता पड़ती भुलक्कड़ सी होकर नल की मुंडेर पर पहुँच जाती, लेकिन रोज की तरह आज उसने पानी न गिरने के रंज को अपने होंठों पर देर तक नहीं रखा। आँगन की बालटी में पानी भरकर रखा हुआ था वह रसोईघर से एक गिलास लाई और उससे पानी लेकर हाथ-मुँह धोए। गरमी इतनी उमस भरी थी कि उसका नहाने का मन हुआ। पर घर के हो-हल्ले को ध्यान में हुए उसका नहाने जाना शायद सामयिक नहीं था। वह रसोईघर में गई और चूल्हा जलाया। यह अजीब सी करामात थी कि एक ही माचिस में उसने चूल्हा जला दिया। मिट्टी का तेल भी इतना ज्यादा न डाला था, जिससे चूल्हा आसानी से जल जाता। इससे पहले उसने जब भी चूल्हा जलाया था, यह काम उसे हर बार बड़ी तकलीफ दे जाता था। वह कितना ही मिट्टी का तेल डाल देती और फर -फर माचिस जलाकर आग में फेंकती जाती, चूल्हा थोड़ी देर भभकता और फिर ठंडा हो जाता। सुधा ठंडे होते जाते चूल्हे को आँखें फैलाए देखती रह जाती। मजबूरी की हालत में उसे अकसर तेतरी को पुकारना पड़ता। तेतरी के हाथों में वाकई जादू होता, जो वह बिना मिट्टी के तेल के ही आग लहका देती।

सुधा को यह विश्वास हो जाना संभव नहीं था कि आज उसके एक ही बार के प्रयास से आग लहक जानेवाली है। वह हाथ में मिट्टी के तेल की बोतल थामे हुए थी कि ज्यों ही आग निष्प्राण होने लगेगी, वह मिट्टी का तेल डालकर मर रही आग में जीवंतता फूँक देगी, पर ऐसी नौबत नहीं आई। आग एक बार जली तो जली ही रही। सुधा को केवल सावधानीपूर्वक लकड़ियों को सधे हाथों उकसाना सजाना पड़ा। वह लकड़ियाँ

सजाने में भी मार खा जाती थी। आज उसने मानो चूल्हे और आग दोनों को अपने अधीन कर लिया था। अलबत्ता धुएँ के बेरोक-टोक इधर उधर फैलते जाने और उसके चेहरे पर आ ठहरने की वजह से उसे जो अकी-बकी हुई, उससे वह परास्त होकर रसोईघर से बाहर निकल गई।यहाँ पर लोककथा की संस्कृति की विवेचना की गई है |

'छोटी मछली बड़ी मछली' उपन्यास में रहन-सहन, पोशाक, धार्मिक त्यौहार, बाल पर्व, विवाह, लोकगीतों में संस्कृति, लोककथाओं में संस्कृति :-

'छोटी मछली बड़ी मछली 'उपन्यास ई.1983 में प्रकाशित हुआ है। नायिका विनोदा के मन में उठ रहे अंतर्द्वंद्व का चित्रण किया गया है। इंग्लैंड से वकालत पास कर आयी यूरोपीय सभ्यता की स्वच्छंद विचारों की विनोदा देश की सामाजिक, न्यायिक एवं राजव्यवस्था से जुड़ती है और बड़ी मछली का साथ देकर छोटी मछली का शिकार कर अपने सच की हत्या करती है। किन्तु आखिर विनोदा के मन में सच-झूठ के बीच संघर्ष होता रहता है और वह सत्य मानवता की तरफ झुककर मृत्यु की तरफ अग्रसरित होती है |

मॉरीशस देश में प्रत्येक व्यक्ति को अपनी संस्कृति और संस्कार के आधार पर जीवन जीने का अधिकार है, किन्तु खान-पान रहन -सहन तो कायम रहा है और रहेगा भी। पहले लोग धोती पहनते थे। स्त्रियाँ साड़ी और लहंगा पहनती थी। आज लहंगा गायब हो चुका है, किन्तु साड़ी वैसी की वैसी है। पुरुषों की धोती गई लेकिन पतलून का प्रचलन अभी है | किन्तु पूजा-पाठ के समय पर पोशाक बदल जाता है। अब पूजा के समय पर कुर्ता पाजामा पहनने का रिवाज हो गया है। स्त्रियाँ साड़ी पहनती है। दुर्गा पूजा के समय पर स्त्रियाँ साड़ी से अपनी भावना व्यक्त करती है। 'छोटी मछली-बड़ी मछली ' उपन्यास में तो संस्कृति का टकराव ही ज्यादा है। प्रस्तुत उपन्यास की प्रमुख पात्र विनोदा इंग्लैंड से वकील बनकर आयी है। वह कोर्ट में हो तो उस पर काला चोगा होता है, किन्तु भीतर में साड़ी अपनी पहचान बनाये रखती है। उसके घर में भारतीय प्रार्थनाएँ गूँजती रहती है |

समय परिवर्तित होने के कारण बहुत कुछ परिवर्तित होता रहा है इसी कारण उन दिनों का परिवेश हमें न भी प्राप्त हो इस उपन्यास में हर मौसम, हर क्षण, समय की प्रत्येक नोक पर यहाँ पर भारतीयता दिखाई देती है। मॉरीशस के लोग भारत और

भारतीय दोनों से बहुत प्यार करते हैं। अपनी जड़े हममे देखते हैं तथा भारतीय संस्कृति पर श्रद्धा रखते हैं |

'चेहरों का आदमी' उपन्यास का रहन-सहन, पोशाक, धार्मिक त्यौहार, बाल पर्व, विवाह, लोकगीतों में संस्कृति, लोककथाओं में संस्कृति :-

यह उपन्यास हिंदी के प्रमुख साहित्यकार रामदेव धुरंधरजी का शुरूआती है, जो 1981 ई. में प्रकाशित हुआ था। प्रस्तुत उपन्यास मूल रूप से वर्ग विशेष की प्रभुत्वशाली राजनीति पर केन्द्रित है, किन्तु इसकी विषयवस्तु में छिटपुट तथा अप्रत्यक्ष रूप से मॉरीशस की वैविध्य विसंगतियों एवं समस्याओं का समाहार भी दिखाई पड़ता है। उपन्यास का मुख्य पात्र राजशेखर एक पेशेवर कलाकार है। विशिष्ट चित्रों को बनाने में उसे महारथ हासिल है, किन्तु मॉरीशस में फ्रांसीसियों का राजनैतिक वर्चस्व होने के कारण यह कलाकार उभर नहीं पाता। फ्रांसीसी चित्रकारों की अपेक्षा उत्कृष्ट चित्र बनाने पर भी वह एक प्रतिष्ठित कलाकार के रूप में अपनी पहचान बनाने से वंचित रह जाता है। एक फ्रांसीसी एक निकृष्ट कोटि का भी चित्र यदि बना ले, तो वे चित्र महंगे दामों में बिककर टूरिस्ट होटल तक पहुँच जाते थे, क्योंकि उनका राजनीतिक दबदबा भारतीयों की अपेक्षा अधिक था और खरीद-फरोख्त, विपन्न आदि की प्रक्रिया में फ्रांसीसियों को ही बहुलता थी। उन दिनों भारतीय मूल के कलाकार उपेक्षित एवं मूल्यहीन थे। राजशेखर के लिए विडम्बना यह होती है कि जब वह अपनी कला की प्रदर्शनी लगाता है, तब अखबारों पर राजनैतिक नियन्त्रण के परिणामस्वरूप उसकी प्रशंसा न होकर भर्त्सना होती है। अखबारों के प्रकाशन का नीति-नियंता फ्रांसीसी होने के कारण यह भेदभाव स्वाभाविक था। राजनीतिक विसंगतियों और विद्रूपताओं से समन्वय न स्थापित कर पाने के कारण राजशेखर को शत्रुओं की सूची में शामिल कर लिया जाता है। राजनेताओं के दलाल घूम-घूम कर पता लगाते रहते हैं कि कौन उनके विरोध में है और कौन उनके समर्थन में। इसके विपरीत राजनीतिक आबोहवा के कारण राजशेखर को सरकारी नौकरी तक नहीं मिलती। उसका अपना ही एक बहुत ही अंतरंग मित्र रामफल को विषाक्त राजनीति का शिकार होकर अन्तत: अपनी जान से हाथ धोना पड़ता है।

राजनीति का एक और जहरीला दलाल हैराऊत। इसकी लगाई आग से सीधे-सादे लोगों का जीवन नर्कातीत बन जाता है। रामफल की विधवा नीलम एकदम

अकेली पड़ जाती है। राजनीतिक साजिशों में घिरे राजशेखर को कैद की सजा हो जाती है, लेकिन सजा समाप्ति के बाद वह विधवा नीलम के साथ परिणयसूत्र बंधन में बंधकर गृहस्थ जीवन की बागडोर संभाल लेता है। इस तरह से राजनैतिक वर्चस्व और वर्गगत भेदभाव के कारण न केवल एक कलाकार की जन्मजात प्रतिभा का दमन हो जाता है, अपितु रामफल जैसे भोले-भाले लोग अपनी जान तक गंवा देते हैं और नीलम जैसी हजारों महिलाओं को विधवा बनना पड़ता है। इस तरह से उपन्यास की विषय-वस्तु राजनीति को केन्द्र में रखकर दुर्वव्यवस्थाओं का चक्कर लगा लेती है। फ्रांसीसियों की व्यवस्था में वर्गभेद और रंगभेद जैसी नीतियों के परिणाम स्वरूप भारतीयों का अपमान होता था। फ्रांसीसी भारतीयों का चेहरा देखकर ही उनके साथ बुरा बर्ताव करते थे और भारतीय भी केवल चेहरे से ही आदमी रह गये थे। रोज उनके साथ पशुतापूर्ण व बर्बरतापूर्ण व्यवहार किया जाता था। इन सब के समन्वय के फलस्वरूप विचार करने से स्पष्ट हो जाता है कि उपन्यास का नाम 'चेहरों का आदमी' बिलकुल सार्थक ही है।

उपन्यासकार धुरंधर जी ने उपन्यास की सार्थकता को सिद्ध करने के लिए तथा उसे यथार्थपरकता की कसौटी पर कसते हुए उसकी उपादेयता को बढ़ाने के लिए केवल कथावस्तु का पूर्ण विस्तार ही नहीं किया, बल्कि उसके शिल्प को भी उतना ही महत्व देते हैं इसीलिए उपन्यास की भाषा प्रवाहमयी और शैली नवीन बन सकी है। उपन्यास में प्रयुक्त संवादात्मक और विचारात्मक शैली कथावस्तु की निरन्तरता बनाये रखने में सक्षम रही है। उनकी लेखकीय प्रतिबद्धता तथा श्रेष्ठ उपन्यासकार के दायित्वों के निर्वहन के फलस्वरूप ही यह उपन्यास यथार्थ की पृष्ठभूमि पर निर्मित होकर उपयोगी बन सका है।

प्रस्तुत उपन्यास में रहन-सहन पुरूषों में कुर्ता पाजामा तथा स्त्रियों में साड़ी का प्रचलन रहा है | राजनीतिक परिवेश का वर्णन किया गया है |

लोकसंस्कृति का अर्थ :-

भारतीय संस्कृति कई संस्कृति, धर्म, जाति और संप्रदायों के समायोजन (समन्वय) से बनी है। बावजूद इसके सभी संस्कृतियों को समाहित करके एक संस्कृति बनी जिसे भारतीय संस्कृति कहते हैं। भारत पर हूण, शक, तुर्क, पठान, मुगलों ने आक्रमण किया। बाद में इनके शासक भारतीय परिवेश में रच-बस गये और भारतीय हो गये। कुछ

साहित्यकार तथा इतिहासकार यह मानते हैं कि भारतीय संस्कृति सभी को आत्मसात कर जाती है। यह आत्मसात कर जाने को हमें नकारात्मक रूप में नहीं लेना चाहिए बल्कि इसे भारतीय संस्कृति की विशेषता मानना चाहिए जो विरोधाभाषों को स्वयं में आत्मसात कर विरुद्धों का सामंजस्य स्थापित करता है। यह समन्वय खुले मन से होता है । 'विश्व लघु कथा कोश' पहला खण्ड में विद्यानिवास मिश्र ने लिखा है- “समन्वय खुले मन से होता है और खुलेमन वाला ही समन्वित होने के लिए तैयार है। यदि मुस्लिम और ईसाई विचारधारा के बीच समन्वय नहीं हो पाया तो कहीं-न-कहीं द्वार बंद जरूर रहे होंगे। परन्तु वर्तमान परिस्थितियों ने यह संभव कर दिया है कि द्वार कोई भी बंद न हो और द्वार खुल रहे हैं, दीवारें ढह रही हैं। इसलिए अब समन्वय विश्व स्तर पर होने की आशा बँध रही है।" 32

विश्व लघु कथा कोश प्रथम खण्ड के संपादकीय लेख में संपादक बलराम ने लिखा है- “एक स्वतंत्र विद्या के तौर पर 'लघु कथा' आज सर्व स्वीकृत है- कहानी की तरह, उपन्यास की तरह। यह कहानी (शार्ट स्टोरी) का लघुतम रूप 'लघु कहानी' (स्टोरियट) नहीं है, यह कथा (फिक्शन) का एक स्वतंत्र प्रकार है, यह बात सुधी जनों को आज भले ही समझ पड़ रही हो, पर सामान्य पाठक, श्रोता और दर्शक के समक्ष कोई पहेली नहीं है, अकेले 'कथा' या अकेले 'कहानी' शब्द उच्च करने की बजाय आम आदमी प्रायः 'कथा-कहानी' शब्द बोलता रहा है; कभी-कभी 'किस्सा कहानी' भी। सामान्य जन के मुँह से उच्चरित यह 'कथा' ही आज 'लघुकथा' है, जिसके प्राचीनतम चिह्न खोजें तो वे लोक-कथाओं में मिलते हैं; नीति बोध कथाओं में मिलते हैं।" 33

अब सवाल उठता है कि लघुकथा और लघु कहानी में क्या अंतर है? क्योंकि कथा तो दोनों में होती है। इस संदर्भ में बलराम आगे लिखते हैं- “मगर इसी तर्ज पर 'लघु कहानी' कहने से इन सबका बोध नहीं होता, 'लघु कहानी' का इनसे दूर-दूर तक का कोई रिश्ता प्रकट नहीं होता। कहानी बहुत नयी अवधारणा है और आज की कहानी तो पहले से ही 'शार्ट स्टोरी' (लघु कहानी-छोटी कहानी) है। लंबी कहानी, कहानी और लघु कहानी में सिर्फ आकार की भिन्नता है। लघु कहानी को कहानी का ही एक प्रकार मानना चाहिए, कथा साहित्य का यह कोई स्वतंत्र प्रकार नहीं है, जबकि 'लघु कथा' आज 'कथा साहित्य' का एक स्वतंत्र प्रकार है-कहानी और उपन्यास जैसा।" 34

चोर को भी भारतीय मन माफ कर देता है। भारतीय संस्कृति प्रतिरोध, प्रतिशोध

और प्रतिकार नहीं सिखाती। शकों, हूणों ने भारत पर आक्रमण किया लेकिन भारतीय मन और संस्कृति हमें शिक्षा देती है-"वह भौतिक वस्तुएँ ही तो चुरा ले गया, हमारे हाथ-पाँव और किस्मत तो नहीं | " 35

हमने तो मंगोलों, शकों, हूणों, मुगलों और अंग्रेजों तक को माफ कर दिया। फिर एक मंदिर के लिए इतनी मार-काट क्यों? विदेशी मुसलमान शायद ऐसी उदारता न दिखा सके, पर भारतीय संस्कृति मिट्टी, पानी, धूप और इसकी हवा में पले-बढ़े भारतीय मुसलमानों में यह उदारता स्वभावतः और स्वतः आ जानी चाहिए कि वे कह सकें कि - "तुम एक मस्जिद की बात कर रहे हो, जाओ, हम तुम्हें काशी और मथुरा की मस्जिदें भी उपहार में दे रहे हैं। इन्हें तोड़कर राम-कृष्ण और शंकर का पुनराभिषेक कर लो। मुसलमानों की इस उदारता से इस्लाम खतरे में नहीं पड़ जाएगा, उल्टे कट्टरपंथी हिन्दुओं के मुँह जरूर धुआं हो जाएंगे; जो सैकड़ों वर्ष पुराने एक खंडहर को ढहाकर ऐसे प्रसन्न है, मानो सारे संसार को जीत गये हों। यह क्षणिक उल्लास न तो भारतीय मुसलमानों के लिए पराजय का कोई चरम क्षण है। " 36

लघु कथा लेखन कोई आसान कार्य नहीं। प्रायः लघुकथा के प्रति हिन्दी आलोचकों की राय बेचारगी भरी होती है लघुकथा लेखन यदि कविता लेखन जितना दुरूह कार्य नहीं तो इससे कम भी नहीं। 'विश्व लघुकोश,' तीसरे खण्ड की भूमिका में संपादक बलराम लिखते हैं कि-"और जो लोग कथा साहित्य को कविता जैसा महत्व नहीं देते, वे इसके साथ ज्यादती करते हैं। कथा साहित्य को कविता जैसा आदर देने के लिए आलोचकगण अभी तैयार नहीं हैं, कथा साहित्य, जिसमें उपन्यास, कहानी, लघुकथा और व्यंग्य सभी शामिल हैं। व्यंग्य तो अभी भी शूद्र है- कुल्हाड़ा चलाने वाला, मल साफ करने वाला जमादार, पर लघुकथा को तो वह निम्नतम सम्मान भी नहीं मिला है, ज्यादा-से-ज्यादा बहुरूपिये या हास्य कलाकार की स्थिति में आलोचकों ने लघुकथा को डाला हुआ है, जबकि लघुकथा ने गीत और गज़ल जैसी लोक ग्राह्य विधाओं की तरह पाठकों और श्रोताओं के बीच अपनी पैठ बना ली है। " 37

लोक-साहित्य :-

लोक-साहित्य लोक-कथाओं से बनता है। भारतीय जनमानस में इतनी विविधताएँ हैं, भाषा, संस्कृति, के आधार पर कि हर प्रांत की अपनी-अपनी पहचान है।

नृत्य के रूप में बिहार में करमा, उड़ीसा में छऊ, पंजाब में भाँगडा, गुजरात में डाँडिया, दक्षिण भारत में भरतनाट्यम कथकली, आदि । प्रेम पर आधारित लोक-कथाओं की भी भरमार है। लैला-मजनूं, हीर राँझा, शीरी-फरहाद, ऐसी लोक पर आधारित प्रेम कथाएँ हैं जिसका अपना सौन्दर्य है। अपनी मिट्टी की पहचान और सुगंध है। मानव के जन्म लेने से लेकर मृत्यु तक भारतीय परंपराओं में लोक का स्थान है। भारतीय परंपरा में जन्म लेने के पूर्व भी गर्भावस्था में गर्भस्थ शिशु को वीरता और ओज की कहानियाँ तथा रामायण का पाठ सुनाने की परंपरा है। जन्म लेने के बाद मंगल गायन, किशोरावस्था, युवावस्था से लेकर मृत्यु तक स्त्रियाँ गीत गाती हैं। सुख-दुःख की हर अवस्था में इसका स्थान है। डॉ. महेश गुप्त ने अपनी पुस्तक 'लोक साहित्य का शास्त्रीय अनुशीलन' में लिखा है- “सुख-दुःख और हर्ष उल्लास, जोकि मानव जीवन के आवश्यक अंग हैं, इनकी ही प्रतिच्छाया है लोक-साहित्य । लोक-मानस के भावों की सहज और स्वाभाविक अभिव्यक्ति ही है लोक-साहित्य लोक-साहित्य में कहीं जीवन की उमंगें हिलोरें मारती हैं तो कहीं वह स्वयं करुणा की ऐसी मूर्ति बन जाता है, जिसमें वेदना मानो टपकी पड़ती है। यह कहीं सत्य का बोध कराकर जीवन में वैराग्य उत्पन्न करता है, तो कहीं मात्र दर्शक बन कर्तव्य-पथ की ओर इंगित करता है।" 38

सवाल उठता है कि साहित्य की कौन-कौन-सी विधाओं में लोक-साहित्य विद्यमान है। आधुनिक विधाओं जैसे-उपन्यास संस्मरण, एकांकी, रेखाचित्र आदि को छोड़कर लगभग सभी विधाओं में यह व्याप्त है। डॉ. महेश गुप्त ने इस संदर्भ में आगे लिखा है- “शिष्ट साहित्य के जितने भी भेद हैं, वे सब भेद लोक-साहित्य में उपलब्ध हैं। मानक साहित्य का प्रबंध काव्य (महाकाव्य) लोक-साहित्य में लोक-गाथा के नाम से जाना जाता है। मुक्तक काव्य एवं गीत काव्य के समान ही लोकगीत आदि हैं।

लोक-साहित्य में मात्र लोक कथा ही एक ऐसी विधा है, जिसे शुद्ध रूप में गद्य-विधा के अन्तर्गत रखा जा सकता है। मानक साहित्य की नाट्य विधा भी गद्य विधा के अन्तर्गत आती है, जबकि लोक-साहित्य के लोक नाट्य अधिकांशतः पद्यबद्ध हैं। " 39

हिन्दी साहित्य के जिस भाग को रामचन्द्र शुक्ल 'वीरगाथा काल' कहते हैं; इसके अन्तर्गत आने वाला अधिकांश साहित्य 'लोक' पर आधारित है। 'पृथ्वीराज रासो' इसमें से एक है। लोक-गीत तथा लोक-गाथा में तात्विक अंतर है। लोक-गीत जहाँ आकार में

छोटा और संक्षिप्त होता है, वहीं लोक-गाथा बहुत बड़ा है। लोक-गाथा की एक अन्य विशेषता है कि यह गेय होता है। हिन्दी साहित्य का आदिकाल ही नहीं, बल्कि भक्तिकाल के प्रमुख कवि - कबीर, तुलसी, सूरदास, मीरा, जायसी की रचनाओं में लोक का प्रचुरता से उपयोग किया गया है। रीतिकाल में यह तत्व भूषण की रचनाओं में देखने को मिलता है। लोक-साहित्य को मुख्यतः इन रूपों में बाँटा गया है (1) लोक-गाथा, (2) लोक-गीत (3) लोक-कथाएँ (4) लोक-नाट्य (5) तन्त्र-मन्त्र साहित्य ।

जहाँ तक लोक-गाथा का प्रश्न है तो पहले ही हम बता चुके हैं कि यह किसी न किसी वीर महापुरुष, ऐतिहासिक, सामाजिक या धार्मिक रूप से महत्वपूर्ण महापुरुषों पर आधारित होता है। इसका कथानक बहुत विस्तृत होता जिसमें कई प्रक्षेप भी होते हैं। इसे एक दिन में गाकर पूरा नहीं किया जा सकता। बिहार में गायी जाने वाली आल्हा एवं ऊदल की कहानी इसी प्रकार की है। यह पहले मौखिक परम्परा में विद्यमान थी, जिसे बाद में लिपिबद्ध किया गया। कई पीढ़ियों से गुजरने के कारण इसके कथानक पर बदलाव दृष्टिगोचर होता है; लेकिन कथा का मूल भाव वैसा ही है। डॉ. महेश गुप्त ने इस पुस्तक में लोक-गाथा की मुख्य विशेषताएँ भी रेखांकित की हैं-

"गेय होना लोक-गाथा का पहला आवश्यक तत्त्व है, क्योंकि लोक-गाथाएँ सदैव गायी ही जाती हैं। लोक-गाथाओं में कथानक दीर्घ रूप में प्राप्त होता है, इनमें संबंधित नायक के जीवन की महत्वपूर्ण घटनाओं का विस्तृत विवरण होता है। इनका कलेवर लोक-भाषा से ही निर्मित होता है। सरल छन्द विधान, प्रवाहमय लोक भाषा, कतिपय प्रचलित अलंकारों एवं लोकोक्तियों आदि का प्रयोग इनकी विशेषताएँ हैं। लोक-गाथाओं में इतिहास सम्मत अनेक पात्रों का वर्णन एवं चरित्र-चित्रण मिलता है, किन्तु इनकी ऐतिहासिकता संदिग्ध होती है। इसका मुख्य कारण गाथाकार में शैक्षिक योग्यता तथा इतिहास संबंधी ज्ञान का अभाव है। इनके रचयिता प्रायः अज्ञात ही होते हैं; यद्यपि कुछ रचनाएँ व्यक्ति विशेष के नाम से प्रकाशित रूप में भी मिलती है, किन्तु मौलिकता की दृष्टि से इनका मूल रचयिता अज्ञात ही रहता है।" 40

लोक-गीत आकार में लोक-गाथा से छोटा होता है। बाकी सारी विशेषताएँ लोक-गाथा जैसी ही होती हैं। जन्म से लेकर मृत्यु तक लोक-गीतों की श्रेणियाँ हैं। विवाह के गीतों पर, संस्कार के गीतों पर मानो महिलाओं सा साम्राज्य स्थापित हो सामाजिक परम्पराओं, रूढ़ियों, रीति-रिवाजों, सामाजिक एवं धार्मिक मान्यताओं की अभिव्यक्ति

के लोक-गीतों का सहारा लिया जाता है। बिहार में आदिवासी एवं अन्य जातियाँ 'करम पर्व' मनाते हैं। इसमें कुँवारी लड़कियाँ या नई ब्याही लड़कियाँ दो दिनों का उपवास करती हैं, और अंतिम दिन जंगल से करम पेड़ की डाली काटकर लाती हैं। इस डाली को खुली जगह पर गाड़कर लड़कियाँ रात भर इसके चारों तरफ घूम-घूमकर नाचती हैं; पूजा करती हैं। कुँवारी लड़कियाँ इसलिए पूजा करती हैं कि उन्हें अच्छा वर मिले जबकि ब्याही औरतें इसलिए पूजा करती हैं, उनका पति स्वस्थ और दीघार्यु बने। इस तरह की लोक-प्रथा भारत के लगभग हर क्षेत्र में प्रचलित है। हिन्दी साहित्य में जायसी का 'पद्मावत' एक महत्वपूर्ण रचना है। 'पद्मावत' में नागमती का बड़ा ही मार्मिक वियोग वर्णन किया गया है। इसमें 'बारहमासा' का चित्रण है। भिन्न-भिन्न बारह माह में नागमती की स्थिति कैसी होती है का सजीव चित्रण है। यह 'बारहमासा' लोक-गीत का ही एक रूप है।

'लोक-कथा' लोक-गीत से भिन्न होता है। लोक-कथा देव कथा के रूप में प्रचलित होती है, जिसकी मौखिक परम्परा होती है । 'तोता-मैना', 'गीत - बसंत' इसी श्रेणी की लोक कथाएँ हैं। हर उम्र के लिए अलग-अलग लोक-कथाएँ होती हैं, जिसमें एक सीख होती है। इसका उद्देश्य ही होता है, समाज में एक ऐसी परम्परा का सृजन करना जिससे समाज में आपसी सौहार्द बना रहे। यह विधा वाचन के आधार पर जिंदा है। बच्चे इसके सबसे बड़े दीवाने होते हैं। प्रायः लोक-कथाएँ रात में सुनाई जाती हैं। लेकिन बच्चे इसे दिन में सुनने की जिद करते हैं। इसी कारण एक कहावत प्रचलित हो गई है- 'दिन में कहानी सुनने से मामा रास्ता भूल जाता है।' बच्चों को मामा बहुत पसंद होते हैं इस कारण बच्चे मामा के मिलने की चाहत में दिन में कहानी सुनने की जिद नहीं करेंगे। यह सिर्फ बच्चों से बचने का एक तरीका है। इसी प्रकार बिहार एवं उत्तर प्रदेश में एक और लोकोक्ति प्रचलित है। यह लोकोक्ति नमक की महत्ता को दर्शाती है। बच्चे खाना खाने वक्त नमक की कम बर्बादी नहीं करते। नमक की इस बर्बादी को रोकने के लिए कहा जाता है- 'बच्चों यदि नमक फेंकोगे तो तुम्हें आँख की पुतली से नमक उठाना पड़ेगा।' बच्चे स्वभावतः डर जाते और नमक की बर्बादी नहीं होती। यदि इस लोकोक्ति को गांधी के 'नमक सत्याग्रह' से जोड़कर देखा जाय तो वह कालावधि लगभग वही है । इस समय भारत में गरीबी चरम पर थी। अंग्रेजी शासन भारतीयों का तरह-तरह से शोषण कर रहे थे इस स्थिति में नमक भी आम आदमी की पहुँच से निकल रहा होगा। ऐसी स्थिति में नमक की बर्बादी रोकने का यह सही तरीका था। लोकोक्तियों या लोक-

कथाओं में ही वह ताकत है, जो इस प्रकार की भावना जनता के बीच फैला सकती हैं। ब्रिटिश साम्राज्यवादी नीति के खिलाफ खड़ी हो सकती है। यदि लोक के बारे में जानना हो तो भोजपुरी के लोक-कलाचार भिखारी ठाकुर उपर्युक्त होंगे। उन्होंने लोक-काव्यात्मक शैली में अनेक नाटक लिखे जिनमें-बिदेसिया, भाई विरोध, बेटी वियोग, कलियुग प्रेम, राधेश्याम बहार आदि प्रमुख हैं। इसके अतिरिक्त भिखारी ठाकुर द्वारा रचित अनेक लोक-गीत हैं जिसे विभिन्न अवसरों पर आज भी गाये जाते हैं। डॉ. बद्री नारायण ने अपनी पुस्तक 'लोक-संस्कृति और इतिहास' में भिखारी ठाकुर के काव्य की महत्ता को रेखांकित करते हुए लिखा है - "इन नाटकों की कथावस्तु, संवाद, इनमें प्रयुक्त कवि एवं गीत तत्कालीन हिन्दी की स्वीकृति कविता के लिए एक चुनौती है। भिखारी ठाकुर की रचनाओं के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि उनमें भारतीय राष्ट्रवाद पर उपनिवेशवाद द्वारा खड़े किये गये राजनीतिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक तीनों चुनौतियों के मुकाबले का माद्दा एवं चेतना मौजूद है, जबकि 1920 के बाद की स्वीकृत हिन्दी कविता अपने को मात्र राजनीतिक तथा सांस्कृतिक चुनौतियों की ही आलोचनात्मकता तक सीमित रखती है। भिखारी ठाकुर भारतीय गाँव-जीवन के आर्थिक अपवाय की दर्दनाक माध्यम गाथा है। पुलिस दमन, सामाजिक विसंगतियाँ नये आर्थिक दबाबों से सामाजिक संबंधों के टूटने की जितनी सूक्ष्म एवं वैज्ञानिक समझ भिखारी ठाकुर के साहित्य में मिलती है, उतनी तत्कालीन अभिजात, स्वीकृत तथा शिक्षित रचनाकारों की रचनाओं में नहीं दिखाई पड़ती।" 41

इसी क्रम में बद्री नारायण ने लोक-भाषा की ताकत पर चर्चा करते हुए लिखा है जिसे एक उदाहरण के माध्यम से सिद्ध करने की कोशिश की है- "चूँकि ये कवि सामान्यजन के मन की भावनाओं की, उनकी क्रिया-प्रतिक्रियाओं की अत्यन्त ईमानदार अभिव्यक्ति दे रहे थे, इसलिए इनका जनाधार अत्यन्त मजबूत था। इनकी इसी ख्याति के कारण कांग्रेस के क्षेत्रीय नेता इनके सामने बार-बार झुकने के लिए मजबूर होते थे। 1929 में स्थानीय कार्यकर्ता आरा, उसके भी दो प्रखण्ड के एक रामनिझावन पांडेय द्वारा अपने जिला मंत्री को लिखे एक पत्र से इन लोक-कवियों का दबाव स्पष्ट होता है।" मंत्री जी! कवि कैलास के रिस के कम कर ही पड़ी। उनका के नाराज करके राजेन्द्र बाबू के सभा हमनी के इहाँ ठीक से नइखीं जा करा सकत। एने सभा शुरू होई ओने ऊ सभा के दोसरा तरफ खंझड़ी लेके गीत गावे लगीहें सब भीड़ ओसही चल जाई।"42

दूसरे देशों की तरह मारीशस में भी लोक कथाओं का प्रचलन है। कुछ लोक-कथाएँ ऐसी होती हैं जो एक जैसी होती हैं लेकिन निश्चित देश काल और परिस्थितियों के अनुसार कुछ जोड़ दी जाती हैं, तो कुछ हटा दी जाती हैं। लेकिन कथानक लगभग एक जैसा ही होता है । यद्यपि सभी देशों की अपनी-अपनी लोक-कथाएँ होती हैं जो वहाँ के परिवेश और परंपरा के अनुसार रची गई होती हैं। 'लोक-कथा' जिसे जनश्रुति या किंवदन्ती भी कहते हैं इसमें थोड़ा तात्विक अंतर है। जनश्रुति अर्थात् एक आदमी ने कहानी सुनायी, कहानी सुनकर दूसरे आदमी ने तीसरे, चौथे आदमी को वह कहानी सुनायी और वह सुनी हुई कहानी देश, जगत में प्रचलित हो गई, जनश्रुति है। किंवदंती अर्थात् दाँतों-दाँत या एक मुँह से सुनकर वही कहानी दूसरे, तीसरे, चौथे के मुँह से ही कह सुनाना यहाँ तक कि सारे देश के लोग कहते-सुनाने लग जाएँ किंवदंती है। जिस कहानी को लोगों ने सुन-सुनकर तथा सुना-सुनाकर जन-मन में प्रचलित कर दी जाती है वह लोक-कथा है। लोक-कथा धार्मिक, ऐतिहासिक, सांस्कृतिक, भौगोलिक, सामाजिक, लौकिक, मनोवैज्ञानिक आदि धरातल पर आश्रित हैं।

यद्यपि लोक के अनेक अर्थ हैं। साधारणतया 'लोक' जगत, संसार, जन, लोग है। 'लोक' का विस्तृत रूप बताते हैं-जो लोक संस्कृत या परिष्कृत वर्ग से प्रभावित न होकर अपनी पुरातन स्थितियों में रहते हैं, वे लोक होते हैं। इस आधार पर पूर्व संचित परम्पराएँ, विश्वास और आदर्श सुरक्षित रहते हैं। लोक-कथाकार श्री व्यथित हृदय ने लिखा है- "लोक-कथाओं का बड़ा महत्व होता है। कहने के लिए लोक-कथाएँ, कथाएँ, होती हैं, पर वे वस्तुतः एक ऐसे भंडार के अदृश होती हैं, जिनमें पुराने जीवन और पुरानी संस्कृति के अनमोल रत्न छिपे रहते हैं। " 43

'मारीच देश की सृष्टि' शीर्षक लोक-कथा इन्द्रदेव भोला इन्द्रनाथ द्वारा रचित है। यह इस संकलन की पहली लोक-कथा है। यह संकलन इन्द्रदेव भोला इन्द्रनाथ, केशवदत्त चिंतामणि, डॉ. मुनीश्वरलाल चिंतामणि, सीता रामयाद, धर्मवीर घूरा, नारायण दत्त बनर्जी, रामदेव धुरंधर, जयन्ती रंगू, लालदेव अंचराज, जनार्दन कालीचरण द्वारा रचित लोक-कथाओं का संकलन है। इन्द्रनाथ भोला इन्द्रनाथ इनमें से एक हैं। उपर्युक्त शीर्षक लोक-कथा में इन्द्रदेव ने मारीशस का निर्माण कैसे हुआ? मारीशस की लोक में क्या व्याप्त है, इसके बारे में लिखा हैं। उनका मानना है कि-"धर्मग्रंथ रामायण में मारीच की अन्तर कथा आती है। मारीच वज्रनाक का पौत्र और राक्षसी ताड़का का पुत्र था। मारीच

रावण के मंत्रियों में था और वह मायावी था। समय-समय पर रावण मारीच की माया का उपयोग करता रहता था और उसकी सुध लेता था।... मारीच ऋषि विश्वामित्र के सिद्धाश्रम के आस-पास रहता। ताड़का और उसका पुत्र मारीच और उसके साथी सुबाहु द्वारा सिद्धाश्रम में निर्दयपूर्वक अत्याचार किये जाते थे और यज्ञादि में विघ्न डाले जाते थे। विश्वामित्र बहुत परेशान थे। वे अयोध्या नरेश दशरथ के पास गए और बड़ी विनम्रता के साथ राजकुमार रामचन्द्र और लक्ष्मण को यज्ञ की रक्षा के लिए माँग लाए। वन के रास्ते पर राम-लक्ष्मण को दबोचने के लिए ताड़का जब झपटी तो राम ने एक ही बाण में उसका वध कर दिया और जब मारीच उसके साथी सुबाहू के साथ मारने आया तो राम ने बगैर फलवाले बाण से मारीच को सौ योजन सागर में फेंक दिया। जहाँ मारीच गिरा वहाँ एक द्वीप बन गया। यही मारीच मारीशस देश बना। फिर भी अपनी माया भाग निकला।" 44

मारीशस की लोक-कथा में मारीच और राम की एक बार और मिलने की चर्चा है। राम और लक्ष्मण तपस्वी भेष में थे। मारीच ने उन्हें साधारण व्यक्ति समझ कर उसे मारने दौड़ा, लेकिन जब राम ने अपने धनुष की डोरी से टंकार की आवाज निकाली तो वे समझ गए कि यह वही राम है जिसने मुझे धनुष के बाण से मारीशस द्वीप पहुँचाया था। अब तक मारीच का हृदय परिवर्तित हो चुका था। वह हिंसा के रास्ते को त्यागकर सही रास्ते पर आना चाहता है। वह राक्षसी प्रवृत्ति को त्याग कर साधु बन जाता है। ठीक इसी समय लक्ष्मण द्वारा सूर्पणखा कांड होता है। ऐसा माना जाता है कि सूर्पणखा पहले राम से प्रणय निवेदन करती है। राम स्वयं को विवाहित बताता है, और लक्ष्मण की ओर इशारा करते हुए उससे बात करने को कहता है। लक्ष्मण कुरूप कन्या से विवाह करने की सिर्फ अस्वीकृति ही नहीं देता, बल्कि गुस्से में उसका नाक, कान काट लेता हैं। प्रश्न उठता है कि क्या किसी लड़की को किसी से प्रेम निवेदन करने का अधिकार नहीं है? क्या प्रेम निवेदन की सजा नाक, कान काट लेना है? फिर ये पूजनीय कैसे हैं? मर्यादा पुरुषोत्तम क्यों कहलाते हैं? इस कांड को आर्य-अनार्य की दृष्टि से भी देखने की जरूरत है। राम आर्य थे जिसे आज की शब्दावली में मनु की संतान कहते हैं और अनार्य भारत के मूल निवासी थे जिसे आज की शब्दावली में दलित और पिछड़ा वर्ग कहते हैं। सूर्पणखा का अपमान दलित और पिछड़ों का अपमान है। यहाँ के मूल निवासी का अपमान है। आज की तारीख में जंगल में रह रहे आदिवासी दलितों की संपदा पर पूँजीवादी के रूप में मनुवादी अधिकार जमा रहे हैं। उनका शोषण कर रहे

हैं। उन पर शारीरिक और मानसिक जुल्म ढा रहे हैं। आज के समय में नक्सल और सत्ता की लड़ाई को इस परिप्रेक्ष्य से देखने की जरूरत है। फिलहाल मैं मारीशस की लोक-कथा पर आना चाहता हूँ। रावण को जब यह जानकारी मिली कि उसकी बहन शूर्पनखा के नाक और कान काट लिये गये हैं तो रावण क्रोधाग्नि में जल उठा। उसने राम की पत्नी सीता के अपहरण की योजना बनाई, जो मारीच की सहायता के बिना संभव नहीं था। मारीच मायावी था। वह किसी भी समय कोई भी रूप धारण कर सकता था। रावण ने मारीच को बुलाकर योजना बताई तो पहले उसने इसमें सहयोग देने से इन्कार कर दिया। जब रावण ने उसे मार देने की धमकी दी तो मारीच को लगा कि रावण के हाथों मरने से ज्यादा अच्छा होगा राम के हाथों मरना । कम-से-कम राम के हाथों मरने से मुक्ति तो मिल जाएगी। मायावी मारीच सोने का सुन्दर हिरण बनकर सीता के बगल से गुजरा। सीता ने सुन्दर हिरण पाने की इच्छा राम से जाहिर की। राम मायावी हिरण के पीछे दौड़ पड़े। मरते समय उसने राम नाम पुकारा और अपने असली रूप में आ गया। जीवन के अंतिम क्षण में राम ने उसकी अंतिम इच्छा पूछी तो भाव विह्वल होकर मारीच ने हाथ जोड़ कहा- "महाराज, मेरी अंतिम इच्छा यही है कि जहाँ मारीच (मारीशस) द्वीप बना है, वहाँ राम की गूँज से वातावरण राममय हो जाए तभी मेरी आत्मा को तृप्ति मिलेगी। " 45

राम ने उसके माथे को सहलाते हुए कहा- तथास्तु! कलियुग में ऐसा अवश्य होगा। और इस प्रकार जब कलियुग आया तो मारीच द्वीप के कोने-कोने में मंदिर बने। सभी ओर रामकथा गूँजने लगी। रोजवेल में डॉ. राजेन्द्र अरुण द्वारा 'रामायण सेंटर' की स्थापना हुई।

'परी तालाब' दूसरी लोक-कथा है। मारीशस के दक्षिण में एक जगह हैं-ग्रांबासे । प्रारम्भ में यह जगह जंगलों से भरी थी। इसके बीच में एक सुंदर तालाब है। लोक-कथा है कि एक दिन झमन गोसाई को सपना आया। वह शिव का बड़ा भक्त था। लेखक ने लिखा है-" झमन गोसाईं सोए हुए से एकाएक जाग उठे। उन्होंने एक सपना देखा था। कोई कह रहा था- मैं शिव हूँ....मेरा अस्तित्व है उस प्राकृतिक झील में जहाँ का जल पवित्र है..वहाँ जाइए....वहाँ जाइए।...यह कैसी दैवी आवाज? प्राकृतिक झील...पवित्र जल ...। यह कैसा सपना? क्या शिवजी, क्या शिवजी सचमुच मुझसे नहीं कह गए? लेकिन यह तो सपना है।...वह सपना उन्हें बार-बार आता। जब वे आँखें मूँदते वहाँ के

दृश्य उनकी आँखों के सामने झूम जाते। फलतः उनके मन में वहाँ जाने की तीव्र उत्कण्ठा जागी। " 46

झमन गोसाईं जैसे शिवभक्त को लगा कि शिव भगवान उनकी भक्ति पर खुश होकर उन्हें बुला रहे हैं। बात भी सच थी। उन्होंने अपने दोस्तों को इसके बारे में बताया। कुछ शिवभक्त उनके साथ हो लिए और वे निकल पड़े तालाब की खोज में। उन्होंने ग्रांबासे की प्राकृतिक झील के बारे में सुना था लेकिन दुर्गम स्थान होने के कारण लोगों का वहाँ आना-जाना नहीं था। झमन गोसाईं ने अपने दोस्तों से कहा- "बंधुओ ! उस पवित्र स्थान पर जाने की मेरी इच्छा प्रबल होती जा रही है। लगता है कि शिव जी उस झील के दर्शन करने के लिए मुझे प्रेरित कर रहे हैं। क्यों नहीं, यदि वहाँ जाने की आपकी इच्छा इतनी प्रबल है। तो हम भी साथ देंगे |" 47

इस प्रकार वे सभी 'ओम नमः शिवाय' का जाप करते हुए झमन गोसाईं के साथ चल पड़े। रास्ता बड़ा ही दुरूह था। झाड़ियों और जंगलों को काटते वे आगे बढ़ते गये। पगडंडियाँ बनती गयीं। हौंसला बुलंद था आखिर वे अपने गंतव्य तक पहुँचने में सफल रहे। झील को देखकर उनकी खुशी की सीमा न रही। घुटनों के बल झुककर उन्होंने उस देवभूमि की वंदना की। झील सचमुच सुंदर था, जैसे प्रकृति ने सारी ताकत इसे सुंदर बनाने में लगा दी हो। झील का पानी भी बहुत शीतल और निर्मल था। झील के बीच में एक टीला है। किंवदंती है कि-“प्राचीन काल में स्वर्ग से परियाँ आकर इस झील में स्नान और जलक्रीड़ाएँ करती थीं उस टीले पर सूर्य स्नान करती थीं और मनोरंजन के लिए नृत्य करती थीं।" 48

यद्यपि फ्रांसीसी शासनकाल में इसका नाम 'Grand Bassin' रखा गया था लेकिन झमन गोसाईं ने इसका सांस्कृतिक नाम 'परी तालाब' रख दिया। झमन और उसके साथी परी तालाब का जल लेकर गाँव लौटे और जल को शिव के मंदिर में शंकर भगवान पर चढ़ाया। उसी दिन से लोग झील को पवित्र मानकर तालाब से जल भर कर काँवर के रूप में लाने लगे। झमन गोसाई का परी तालाब पर प्रथम पदार्पण होने के बाद त्रियोले निवासी पं. सजीवन लाल जिन्होंने त्रियोसे महेश्वरनाथ शिवालय का निर्माण किया था शिवलिंग के अभिषेक के लिए अपने कुछ साथियों के साथ कंधों पर काँवर लेकर सन् 1889 में परी तालाब के लिए प्रस्थान किया। लेखक ने आगे लिखा है - "लगभग आठ दशक बाद परी तालाब का दूसरा नामकरण हुआ। एक भारतीय पंडित

ने सन् 1962 में भारत से गंगा जल मँगाकर तालाब में प्रवाहित किया उसका नाम 'गंगा तालाब' रखा। प्रधानमंत्री डॉ. नवीनचन्द्र रामगुलाम ने सन् 2005 में हिमालय से प्रवाहित गंगोत्री से पवित्र जल लाकर गंगा तालाब में डाला तो उसका महत्व अधिक बढ़ गया।" 49

इस प्रकार 'परी तालाब' 'गंगा तालाब' बन गया। हर एक साल शिवरात्रि के दिन मारीशस के लोग श्वेत वस्त्र धारण कर एवं गांधी टोपी पहनकर और कंधे पर रंग-बिरंगे कॉवर लेकर दूर-दूर से पद यात्रा कर आते हैं। कई दिनों तक यह पद यात्रा चलती है तब जाकर लोग 'गंगा तालाब' पहुँचते हैं। इसमें सिर्फ मारीशस से ही नहीं बल्कि भारत, मलेशिया, हॉलैंड, दक्षिण अफ्रीका से भी भक्तगण पहुँचते हैं। गंगा तालाब की खोज करने वाला झमन गोसाई आज भी जिंदा है। वहाँ जाने वाले रास्तों के नाम झमन गोसाई के नाम पर रख दिया गया है।

मारीशस में हिरण को छोड़कर कोई जंगली जानवर नहीं है। इसके पीछे भी एक लोक-कथा है। प्रारंभ में मारीशस के जंगल में शेर बहुत बड़ी संख्या में थे। प्रायः सभी जगह बीहड़ जंगल होते थे। मानव बस्ती जहाँ-तहाँ थी। ग्रांपोर जिले के जंगल में एक तपस्वी वर्षों से ईश्वर ध्यान में मग्न थे। उनका शरीर बहुत कमजोर पड़ गया था और लंबी-लंबी दाढ़ी निकल आई थी। कई महीनों तक बिना अन्न-जल का सेवन किये रह रहे थे, जिसके कारण उसमें दैवी शक्ति आ गई थी। यह तपस्वी भी उसी जंगल में तपस्या करते थे जिस जंगल में एक खूँखार सिंह भी रहता था। इस सिंह ने कई शिकारियों को मार खाया था जिससे शिकारी भयभीत थे और उन्होंने इस सिंह को पकड़कर मारने की योजना बनाई । उन्होंने जगह-जगह नुकीली कीलें गाढ़ दीं ताकि सिंह के पंजों में गड़ जाने से वह भाग न सकेगा और उसे पकड़कर मारना आसान हो जाएगा।

एक दिन सिंह शिकार की खोज में निकला और उधर ही चल पड़ा जिधर तपस्वी तपस्या कर रहा था। लेकिन वह नहीं जानता था कि रास्ते में नुकीली कीलें गढ़ी हैं। एक कील उसके पंजे में चुभ गयी और जोरों से खून बहने लगा।

सिंह दर्द के कारण जोर-जोर से दहाड़ने लगा। उनकी यह दर्द भरी आवाज तपस्वी के कानों तक पहुँची तो वे समझ गए कि सिंह किसी समस्या में है । दया के सागर तपस्वी सिंह की मदद के लिए चल पड़े। सिंह को लहूलुहान देखकर वे उस पर द्रवित हो गये और पंजे से कील को निकाल दिया। अपने तप के बल पर पंजों पर हाथ

फेरे तो तुरन्त उसका दर्द चला गया और पंजे पूर्ववत् ठीक हो गये। लेकिन सिंह अपनी पशु प्रवृत्ति से बाज नहीं आया । तपस्वी को देखकर उसका मन काबू में न रहा। मनुष्य का मांस उसने कई महीनों से नहीं खाया था। वह तपस्वी पर झपटा। तपस्वी समझ गया कि सिंह उपकार के बदले उसे खाना चाहता है। तपस्वी ने मंत्रोच्चारण किया। देवता प्रकट हुए। स्थिति से अवगत होकर देवता ने सिंह से कहा- "अरे दुष्ट जानवर ! जिसने तेरी जान बचायी, तुझे जीवनदान दिया उसी से तूने विश्वासघात करना चाहा। तू कितना कृतघ्न है। मैं तुझे श्राप देता हूँ कि इस टापू से तेरी नस्ल का नामोनिशान मिट जाएगा। तू पाषाण बन जाएगा और सदा-सर्वदा धूप-वर्षा और गर्मी सर्दी सहता रहेगा। " 50

लोक-गीत बीते हुए युगों की स्मृतियों को जगाते हैं। भारतीय लोक-गीतों ने भी अपना सहयोग दिया है। जन्मोत्सव एवं विवाह-संस्कार के अवसरों पर गाए लोक-गीतों का स्वर मन को बाँध देता है। इसके अतिरिक्त बिरहा और आल्हा भी मारीशस में है। मारीशस के भोजपुरी ग्राम-गीतों का संग्रह प्रकाशित हुआ है। 'मधुकलश' के नाम से ग्राम-गीतों का संग्रह मारीशस लोक-साहित्य को प्रदर्शित करता है। इसके संपादक हैं श्री ब्रजेन्द्र भगत मधुकर मारीशस का यह सबसे पहला लोक-साहित्य संग्रह है। 'मधुकलश की भूमिका में श्री रामधारी सिंह दिनकर ने लिखा है-“मधुकलश लोक-संस्कृति की दृष्टि से बहुत ही अच्छा ग्रंथ है। मारीशस के हिन्दुओं और यहाँ के निवासियों के बीच संपर्क स्थापित करता है। इस संग्रह की प्रतियाँ मारीशस और भोजपुर दोनों ही जगहों पर प्रचार पाएँगी। " 51

इस उपन्यास में करीब-करीब ब्याह-शादी के सभी रस्मों के लोक-गीतों का वर्णन हुआ है। झूमर, मटकोड, परीछावन सभी प्रकार के गाने हैं। इन गानों का दर्रा बहुत कुछ भारत के उत्तर बिहार में गाए जाने वालों से मिलता-जुलता है। बेटी की शादी के गानों में यहाँ उत्तर-प्रति-उत्तर भी मिलते हैं। वही रूप मारीशस में भी प्रचलित है। कुछ उदाहरण मारीशस के लोक-गीतों के प्रस्तुत हैं

"परिछावन- प्रेम से आरती उतारी जी | बर व्याहन आयो। गावहु मंगलचारिणी । बर व्याहन आयो। कंचन थारी कपूर के नाती, प्रेम से आरती उतारो जी। बर व्याहन आयो।"

प्रश्नोत्तरी-

पिता-पुत्री संवाद

पिता-पुरुष से अइले रे जोगी, पछिम कहाँ जाले कवन चौपरिया ए जोगी, बइसे आसन मारी, जोगी हम त बियाहन अइली तोहर बेटिया कुंवारी।

बेटी ब्याह के योग्य हो चली है तथा उसका भाती दामाद योगी के वेश में आकर व्याह की इच्छा प्रकट करता है। इस गीत में भावनाएँ मार्मिक हैं। पुत्री के पूछने पर कि इस योगी के आप क्यों हैं तो पिता का उत्तर है कि योगी के पान-फूल को खाकर मैं धर्म से बँध गया हूँ। इन पंक्तियों में भारतीय संस्कृति का प्रभाव स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। वचन का महत्व सदैव से भारतीयों ने माना है और वही वचनबद्धता सुदूर मारीशस में भी पाई जाती है।

मट कोड़ का एक उदाहरण -

नाहीं होवे हावी झीन, नाहीं होवे घोड़ा झीन ।

नाहीं होवे डोले के कहार जी।

व्याह का यह एक रस्म है। इस विधि में धरती माता की महत्ता दिखाई पड़ती है। कन्यादान का उदाहरण इस प्रकार है-

"चौका चढ़ि बैठेला गोरा सिया देवि |

गौरासिया देवि, वर जे करेला सविकार जी।

एक ओर बैठेला नेहर के लोगवा

नेहर के लोगवा, एक ओर ससुरा के लोग जी।

यह बेटी विवाह का सबसे मार्मिक अंश है। उस समय कोई भी व्यक्ति ऐसा नहीं होता जिसकी आँखें गीली न हो जाएँ। यहाँ तक कि कन्यादान का गाना भी पूरी तरह औरतें नहीं गा पाती हैं। भावों के बाहुल्य से उनके कंठ अवरुद्ध हो जाते हैं। बहुत सारी महिलाएं तो अपनी भावनाओं को रोक नहीं पाती और फूट-फूट कर रोने लगती हैं, किन्तु माता-पिता को कन्यादान करना ही है, क्योंकि शास्त्र में ऐसा विधान है कि “छिया

बिन धरम न होई।" वरछिया का एक उदाहरण- बरछिया, वरछा, सगाई या सगुन को ही कहा जाता है। इस विधि के द्वारा वर या कन्या को 'सुरक्षित' समझा जाता है।

कहवाँ से आवेले विप्रा करने के दुआर भेले ठाड़ा

हाय तिलक लेले अवरी वरछिया।

इसी प्रकार तिलक तथा बारात आदि के गीत पाये जाते हैं। इन सभी विधियों में कुछ रस्में अत्यन्त मनोरंजक हैं। सभी उनकी प्रतीक्षा अत्यन्त आतुरता से करते हैं। महिलाएँ पहले से ही इसकी तैयारी करती हैं। वह प्रसंग है-भसुर के गारी इस रसम को भारत में 'निरीछन' कहा जाता है। दूल्हे का बड़ा भाई इस रस्म को करता है। इस रस्म में यह भावना रहती है कि आज से तुम हमारे अनुज की वधू बनीं और तुम्हारी मर्यादा की रक्षा अगर अनुज नहीं करेगा तो मैं करूँगा। दुल्हन को सभी आभूषण मड़वे पर इसी समय चढ़ते हैं। मारीशस में इस अवसर पर दूल्हे के ज्येष्ठ भ्राता पर जो अमृत वर्षा होती है; इसका एक उदाहरण इस प्रकार है-

“एछिया भंसुर तो के लाज नहीं लागे रे ।

मंगनी के कनफुल मड़ौवा झमकावे रे।

सियावत वा खपटा दाँत दिखाता। काना आँख मटकाबाट बाहे एमिंसुरी नहीं लागे ।"

खुशी की बात है कि सर महाराज इन बातों का बुरा नहीं मानते, प्रत्युक्त मंद-मंद मुस्कराते हुए अपनी प्रसन्नता करते हैं। श्लेष , व्यंग्य सभी प्रकार की कटूक्तियों की वर्षा की फुहार दूल्हे के ज्येष्ठ भ्राता पर होती है। कुछ लोक-गीतों में अंतर भी है। मारीशस में वही दूसरी रस्म में गाया जाता है जबकि भारत में वह गीत दूसरी रस्म के लिए प्रयुक्त होता है जैसे दहेज पर-

"कवने गहनवा बाबा साँझ ही लागे-ला '

कवने गरन भिनुसार ए ।

कवने गरहनवा बाबा माडो लागेला

कब दुनो डगरही होईए।"52

भारत में यह गीत बेटी-विवाह के गीत के रूप में प्रचलित है तथा शब्दों के भावों में भी अन्तर है। इस गाने के श्रोता या गायक सहसा उदास हो हैं। यह बोध कराता है कि बेटी पराई चीज है और उसे एक दिन दूसरे को देना ही है। बेटी धर्म है पिता का माँ का भाई का, उस समाज का भी, जिस समाज में वह रहती है। भारत में एक फिल्म है- 'गंगा मईया तोहे पियरी चढ़इयो' । मधुकर जी कृत 'मधु कलश' में एक लोक-गीत है। इसे झूमर के अन्तर्गत रखा है। गीत का शीर्षक है- 'गंगा पूजा'

"ए गंगा मैया, तोके पियरी चढ़वों

सैयाँ से कर दे मिलनवा राम ।

गंगा नहाई, सूरज गोड़ लाँगू ।

सैयाँ से कर दे मिलनवा राम ।"53

भारत में यह फिल्मी भोजपुरी गीत है। फिल्म है-गंगा मईया तोहे पियरी चढ़इबो'। जिस श्रद्धा भाव से गंगा मैया के प्रति यह गीत मारीशस में गाया जाता है; उस भाव से यह गीत हमारे भारत में नहीं गाया जाता है। भारत में एक प्रसिद्ध लोक-गीत झुमर 'झुमका गिरा रे बरेली के बाजार में' प्रचलित है। उसी प्रकार मारीशस में भी लोक-गीत गाया जाता है-

झुमका गिरा रे, रोजिल के बाजार में।

भारत में जो स्थान 'बरेली' का है मारीशस में वह स्थान 'रोजिल' शहर का है। कुछ गीत राष्ट्रीय भावनाओं से ओत-प्रोत हैं। जिस समय प्रवासी भारतीय अंग्रेजों के क्रूर चंगुल में थे, उस समय उनके कुछ भोजपुरी गीत आंतरिक बल प्रदान करते थे। एक उदाहरण प्रस्तुत है-

"जरि गैले हो मुसे मानेस के मुलवा

मुला में आग लागल,

दमकल न पानी

सारा मुला जर गइल,

लछमनिया रे निशानी,

जरि गैले ..... |"54

अर्थात् एक कारखाने के मालिक का कारखाना जल गया। 'मुला' अर्थात् मिल में आग लग गई है और वहाँ न उस अग्नि को शांत करने के लिए अग्निनाशक हैं न पानी। संपूर्ण मिल जलकर खाक हो गई। सिर्फ मिल की चिमनी ही निशानी के रूप में बच रही है। इन गीतों ने शर्त बंद मजदूरों की फौलादी हड्डियों को सब प्रकार की यातनाएँ सहने के योग्य बनाया है।

निष्कर्ष :-

उपन्यास ही एक ऐसी साहित्यिक विधा है।जिसमें लेखक कथावस्तु को संतुलित रखते हुए वैचारिक अभिव्यक्ति के लिए स्वतंत्र होता है | यद्यपि दूसरी गद्य विधाओं की तरह ही उपन्यास की कथावस्तु भी कल्पित या वास्तविक पात्रों द्वारा नियंत्रित होती है , इसके बावजूद भी इसमें उपन्यासकार को अपने सिद्धान्तों , और दृष्टिकोणों को व्यापक स्वरूप प्रदान करने तथा उन्हें प्रकट करने का उचित रंगमंच प्राप्त हो जाता है | उपन्यास न सिर्फ गद्यात्मक कथानक के द्वारा जीवन तथा समाज की व्याख्या का सर्वोत्तम साधन है ,अपितु एक लेखक के व्यक्तिगत दृष्टिकोणों , सिद्धान्तों तथा अंतर्मन की अनुभूतियों की सफल अभिव्यक्ति का परिणाम भी है |

सतत साहित्य सृजन तथा अध्ययन के बावजूद भारत की अपेक्षा द्वीपीय देश मॉरीशस में हिंदी उपन्यास बीसवीं शताब्दी के सातवें दशक में मॉरीशस की स्वतन्त्रता के बाद ही साहित्यिक विधा के रूप में अस्तित्व में आ सका | प्रस्तुत अध्याय रामदेवधुरंधर के उपन्यासों में भारतीय संस्कृति एवं परिवेश बोध के अंतर्गत मैंने ' छोटी मछली-बड़ी मछली ' , 'चेहरों का आदमी ', 'बनते बिगड़ते रिश्ते ' इत्यादि उपन्यासों के रहन-सहन , पोशाक , धार्मिक त्यौहार , बाल पर्व , विवाह लोकगीतों में संस्कृति , लोककथाओं में संस्कृति आदि का गहन अध्ययन किया है |

संदर्भ -सूची :-

1.दृष्टव्य -कलम का मजदूर -मदन गोपाल-पृ.329

2 .दृष्टव्य .प्रेमचंद और उनका युग -डॉ. रामविलास शर्मा -पृ.31

3 .न्यू इंग्लिश डिक्शनरी

4 .द नोवेल एण्ड द पीपुल-रॉल्फ फॉक्स -पृ.21

5 .साहित्या लोचन -डॉ श्यामसुंदर दास -पृ.135

6 .कुछ विचार .प्रेमचंद-पृ.46

7 .हिंदी साहित्या कोश .भाग .1 पृ.153

8 .The Meaning of Culture .K. M. munshi our greatest Need - पृ.58-60

9 .भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता -डॉ. प्रसन्न कुमार आचार्य .पूर्वाभाष-पृ.1

10 .भारतीय संस्कृति को गोस्वामी तुलसीदास का योगदान .संस्करण-1953 .अध्याय .1.पृ.1

11 .'Culture '-Ed. 1952 , A-L-kroeber and clyde p.33

12 .Culture and History -phillip Bagby-Ed-1951 .पृ-72

13 .Dictionary and definition-A. L. kroeber and clyde p.33

14 .दृष्टव्य .वही

15 .वही

16 .Chamters Twentieth Centurys .Dictionary-Ed.1957 -पृ.257

17 .भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता -डॉ. प्रसन्न कुमार आचार्य .संस्करण 2014 .पूर्वाभाष -पृ.1

18 .दृष्टव्य-जयचंद विद्यालंकार -का.क. ख.1st. Ed.1938 -पृ.1

19 .Bous and others-General-anthropology, Ed.1938 पृ.4

20 .भारतीय संस्कृति-डॉ. बलदेव प्रसाद मिश्र -पृ.15 संस्करण 1952

21 .वही .पृ-17

22 .वही .पृ.15

23 . I. E. S. Glories of india on indian culture and civilation-dr. p. k. acharya .पृ.5

24 .Indian culture -Dr. S.k. chatterjjee -पृ.160

25 .बनते बिगड़ते रिश्ते .रामदेवधुरंधर -पृ.7

26 .वही .पृ-15

27 .वही .पृ.22

28 .वही

29 .वही .पृ.11

30 . वही .पृ.12

31 .बनते बिगड़ते रिश्ते .रामदेवधुरंधर-पृ.97-98

32 .विश्व लघुकथा कोश-पहला खंड .विद्यानिवास मिश्र .पृ.6-7

33 .वही

34 .वही

35 .वही.पृ.5

36 .वही .पृ.6

37 .वही .पृ.8

38 .वही .पृ.7

39 .वही .पृ-64

40 .वही .पृ.6

41 . लोकसंस्कृति का इतिहास .बद्रीनारायण. पृ.38

42 .वही

43 .मॉरीशस की लोककथाएँ .सं. मुनिश्वरलाल चिंतामणि दो शब्द से .स्टार पब्लिकेशन दिल्ली

44 .वही .पृ.2

45 .वही .पृ-3

46 .वही .पृ.7

47 .वही .पृ.8

48 .वही

49 .वही .पृ.9

50 .वही .पृ.11

51 .वही